ब्रज भाषामृत

— डा० वासुदेव कृष्ण चतुर्वेदी

ब्रजभाषामृत

लेखक:—

सप्ताचार्य

डॉ० वासुदेवकृष्णचतुर्वेदी

एम.ए. (हिन्दी-संस्कृत) पी-एच.डी. डी.लिट्.

रीडर एवं अध्यक्ष संस्कृत विभाग

प्राच्यदर्शन महाविद्यालय

वृन्दावन (मथुरा)

प्रकाशक:—

अखिल भारतीय ब्रजसाहित्य मण्डल

मथुरा (उ०प्र०)

वितरक:—

श्रीकृष्णसत्संगभवन प्रकाशन

मथुरा (उ०प्र०)

लेखकः—डॉ०वासुदेवकृष्ण चतुर्वेदी

प्रकाशकः—

अ०भा० व्रजसाहित्यमण्डल (मथुरा)

वितरक —

श्रीकृष्णसत्संगभवनप्रकाशन

६६६—गतश्रमटीला

मथुरा (उ०प्र०)

प्रथम संस्करण—११०० प्रति

विक्रमाब्द २०४० सन् १९८३

मूल्यः—२५) रु०
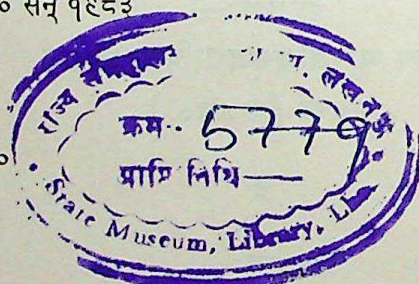
मुद्रकः—मदन मोहन प्रिंटिंग प्रेस,
७२२ बलिटीला जनरलगंज, मथुरा (उ०प्र०)

BRAJ BHASHAMRAT
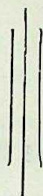
By

Saptacharya.

Dr. V. K. Chaturvedi

M. A. (Hindi-Sanskrit) Ph.D., D. Litt.

Reader and Head of the Sanskrit Department.

Institute of Oriental Philosophy

VRINDABAN (MATHURA)

Publisher

Akhil Bharatiya Braj Sahitya Mandal

MATHURA (U.P.)

Distributor

Shri Krishna Satsang Bhawan Prakashan

MATHURA (U.P.)

By

Dr. V. K. Chaturvedi

Publisher:—

Akhil Bharatiya Braj Sahitya Mandal
Mathura.

Distributor:—

Shri Krishna Satsang Bhawan Prakashan
966-Gatashram Tila Mathura (U.P.)

First Edition-1100 Copies

Year 1983
Price-25 Rupees
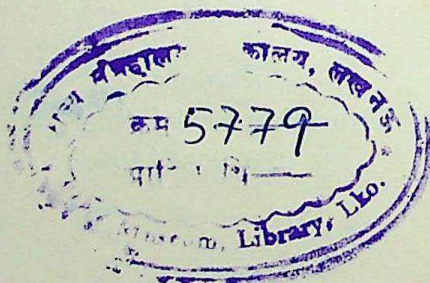
Printed by:—

Madan Mohan Printing Prass
Mathura.

प्रकाशकीय

जैसे ब्रज-संस्कृति भारतीय संस्कृति का मूलाधार है वैसे ही ब्रज-भाषा का साहित्य विश्वभाषा साहित्य का मूलाधार है। साहित्य के आदि सूर्य 'सूरदास' ने ही नहीं अपितु श्रीहित हरिवंशजी, नंददास, कुंभनदास, छीतस्वामी, स्वामी हरिदास, रसखान मीरा आदि अनेक भक्त कवियों ने ब्रज संस्कृति के प्राण श्रीकृष्ण की अनेक लीलाओं का गान कर अपने को धन्य माना है। प्राचीन एवं अर्वाचीन ब्रजभाषा-साहित्य एवं कला में युग पुरुष श्रीकृष्ण की मनोहारी लीलाओं से भरपूर है। ब्रजभाषा उत्तर से दक्षिण और पूर्व से पश्चिम तक समस्त भारत भूमि की राष्ट्रभाषा एवं काव्य भाषा रही है। महामहिम डॉ० राजेन्द्रबाबू के शब्दों में "ब्रजभाषा की महानता इसी से व्यक्त है कि कृष्ण गाथा भारतीय जन जीवन की, भारतीय संस्कृति और भारतीय इतिहास की अमूल्य निधि है।" डॉ० सम्पूर्णानन्द के शब्दों में "हिन्दी साहित्य तो ब्रजभाषा-साहित्य के बिना कोई अर्थ नहीं रखता"।

ब्रजभाषा-साहित्य के संकलन, संवर्धन एवं उन्नयन की ओर हिन्दी जगत के नेता श्रद्धेय पं० श्रीनारायण चतुर्वेदी, सेठ कन्हैयालाल पोद्दार, आचार्य जवाहरलाल चतुर्वेदी, डॉ० बनारसीदास चतुर्वेदी, डॉ० बासुदेव शरण अग्रवाल आदि का ध्यान आकर्षित हुआ। श्री बनारसीदास चतुर्वेदी ने ब्रजसाहित्य मण्डल की स्थापना का विचार उठाया और शरद पूर्णिमा के अवसर पर सेठ कन्हैयालाल पोद्दार की अध्यक्षता में हिन्दी साहित्य परिषद की हुई बैठक में सन् १९४० में निश्चय किया गया कि ब्रज साहित्य मण्डल की स्थापना हिन्दी साहित्य और ब्रज के साहित्यिक विकास के लिए बहुत उपयोगी ही नहीं वरन् वर्तमान काल में ब्रज के सार्वजनीन सांस्कृतिक विकास और साहित्यिकों के संगठन के लिये आवश्यक है। इसी विचार के क्रियान्वयन हेतु १९ और २० अक्टूबर १९४० को साहित्यानुरागियों ने मथुरा में ब्रज साहित्य सम्मेलन आयोजित किया जिसमें श्रद्धेय डॉ. वासुदेवशरण जी अग्रवाल की अध्यक्षता में मण्डल का गठन हुआ। मण्डल के गौरव के अनुसार मण्डल के अध्यक्ष पद को पं० श्रीनारायणजी चतुर्वेदी, डा० रामप्रसाद त्रिपाठी, श्रीकृष्णदत्त पालीवाल, श्रीबालकृष्ण शर्मा 'नवीन', सेठ गोविन्ददास, डा० धीरेन्द्र वर्मा, डा० सम्पूर्णानन्दजी, श्रीवियोगीहरि, श्रीगुलाबराय जी,

डा बनारसीदासजी चतुर्वेदी, बाबू राजबहादुर, बाबू वृन्दावनदास ने सुशोभित किया है और अब मण्डल का नेतृत्व का अध्यक्ष पद महान विद्वान डा० विद्यानिवासजी मिश्र ने सम्हाला है।

ब्रज साहित्य मण्डल ने समय समय पर अनेक महत्वपूर्ण ग्रन्थों का प्रकाशन भी किया है जिनमें पोद्दार अभिनन्दन ग्रन्थ, अष्टछाप के वाद्ययन्त्र, ब्रज का इतिहास, ब्रज का लोक साहित्य, ब्रजभाषा गद्य सौरभ आदि प्रमुख हैं।

अब मण्डल का उन्नीसवाँ अधिवेशन होने वाला है। मण्डल के निर्वाचित अध्यक्ष पं० विद्यानिवास जी मिश्र का मत है कि अधिवेशन के अवसर पर कुछ महत्वपूर्ण प्रकाशन ब्रजभाषा सम्बन्धी प्रकाशित हों। मैंने अपना विचार मण्डल के स्तम्भ एवं परम सहयोगी और वर्त्तमान में संस्कृत के प्रसिद्ध ख्याति प्राप्त विद्वान डा० वासुदेवकृष्ण चतुर्वेदी को सुनाया, डा० चतुर्वेदी ने नन्दोत्सव, अमृततरंगिणी, श्रीद्वारवाधीशमहाकाव्य श्रीइन्दिरा काव्यम् आदि अनेक ग्रन्थों की रचना की है। डा० चतुर्वेदी ने मेरे विचार को बल देने हेतु मण्डल के इस अधिवेशन के सुअवसर पर रसमयी एवं भावमयी ब्रजभाषा में सुरुचिपूर्ण इस ग्रन्थ की रचना कर हम सबको आनन्दित किया है जिसके लिए वह बधाई के पात्र हैं। मुझे आशा है कि डा० चतुर्वेदी के इस ग्रन्थ को पाकर ब्रज प्रेमियों में ब्रजभाषा के प्रकाशन हेतु अभिरुचि जागृत होगी और अनेक लुप्त एवं गुप्त गौरव ग्रन्थों के प्रकाशन से हिन्दी संसार लाभान्वित होगा डा० चतुर्वेदी के सफल लेखन एवं प्रकाशन से मण्डल गौरवान्वित हुआ है। प्रभु से प्रर्थना है कि डा० वासुदेवकृष्ण चतुर्वेदी उत्तरोत्तर यश प्राप्त कर ब्रज मण्डल की शोभा बढ़ाते रहें।

कार्तिक पूर्णिमा
वि०संवत २०४०

आचार्य जुगल किशोर चतुर्वेदी, ऐडवोकेट,
प्रधानमंत्री

अखिल भारतीय ब्रज साहित्य मण्डल

ग्रन्थ लेखक :-

डॉ० वासुदेवकृष्ण चतुर्वेदी

रीडर एवं अध्यक्ष संस्कृत विभाग

प्राच्यदर्शन महाविद्यालय

वृन्दावन, मथुरा (उ० प्र०)
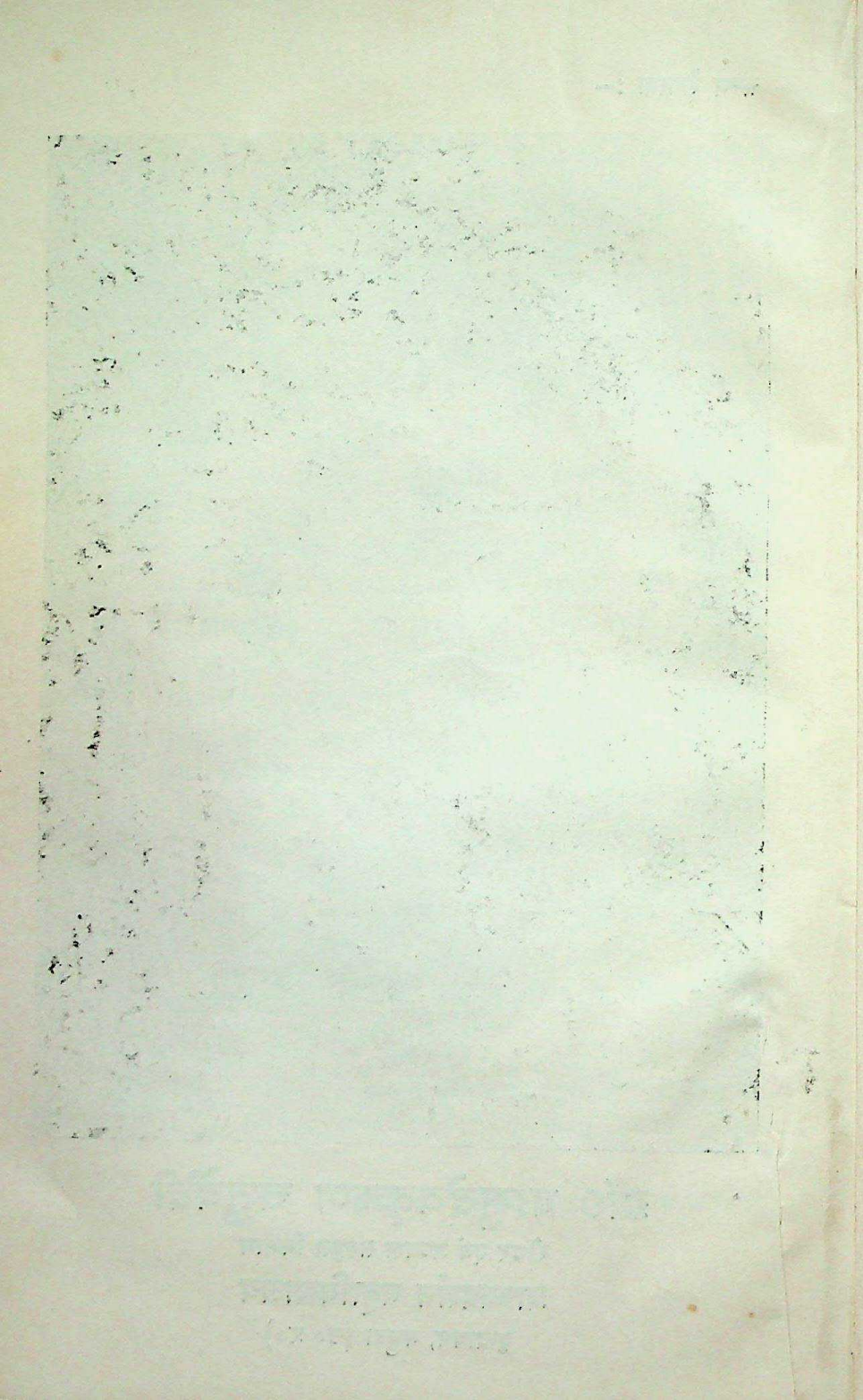
सम्मति

डा० अगम प्रसाद माथुर

पी-एच.डी.,एफ.आई.एच.एस.,एफ.आर.ए. (लन्दन)

कुलपति

आगरा विश्व विद्यालय दिनांक–२५–८–८३

आगरा

प्रिय डा० चतुर्वेदी,

आप द्वारा सम्पादित एवं लिखित पुस्तक 'व्रजभाषामृत' की प्रति प्राप्त हुई। धन्यवाद !

यह पुस्तक व्रजभाषा में बहुत ही आकषक ढंग से लिखी गई है। व्रज-भाषा की महिमा तो स्वतः ही स्पष्ट है। व्रजभाषा का साहित्य हिन्दी साहित्य से अलग नहीं किया जा सकता।

सूरदास, नन्ददास, मीरा की वाणी एवं रसखान, नवी के सुन्दर भाव इस भाषा के माध्यम से आज भी वही रूप और प्रेरणा लिये हुये हैं।

मेरा हिन्दी के अध्यापकों और शोधकर्ताओं से निवेदन है कि व्रजभाषा में छिपे हुए गुण, रहस्यों को उजागर करने का वे सतत प्रयास करें।

शुभ कामनाओं सहित,

आपका

अगमप्रसाद माथुर

डा० वासुदेवकृष्ण चतुर्वेदी

अध्यक्ष संस्कृत विभाग

प्राच्यदर्शन महाविद्यालय

वृन्दावन

* पुरोवाक् *

यद्यपि बाल्यावस्था से अब तक मातृभाषा व्रजभाषा रहीहै और परम्परा की श्रीमद्भागवत पुराण की कथा भी व्रजभाषामें ही विशेष रूपमें सर्वत्र प्रस्तुत की जाती रही है तथापि पितृ प्रभाव से संस्कृत की घुटी मिलने से संस्कृत में ही अबतक ग्रन्थ रचे और संस्कृत में ही खण्डकाव्य और महा-काव्य भी बनाये। विभिन्न पुरस्कार भी संस्कृत भाषाने दिलवाये, पर कसक वनी रही उस भाषामें लिखने की जिसमें "हरिने मचल मचलकर मां यशोदा से रोटी मांगी थी।" व्रज साहित्य मण्डलके अधिवेशनमें जो वृन्दावन में पूज्यपाद श्रीअखण्डानन्दजी सरस्वतीजी के सान्निध्य में दि० २७-१२-८१ को मनाया गया था, इसमें विद्वानों को एक मांग की पूर्ति तो मैंने तत्काल पूर्ण करही दी थी क्योंकि उनकी इच्छाके अनुसार मैंने व्रजभाषामें भाषण प्रस्तुत किया था। दूसरी आकांक्षा कि व्रजभाषामें भी लिखा जाय की पूर्ति यत्किंचित् रूपमें 'श्रीव्रजभाषामृत' के संकलनके रूपमें प्रस्तुत करते हुए आल्हाद का अनुभव हो रहाहै कि इससे व्रजभाषामें लिखने की परम्परा आगे और वढेगी।

मेरे पितामह पं०बन्नाजी पौराणिक 'वनेश' कथा वाचनमें प्रसंग के अनुसार व्रजभाषाका ललित गद्य भी प्रस्तुत करते और पद्य भी। नन्दोत्सव, रासलीला, मथुरा प्रवेश, कंसवध, गौचारण आदि व्रजभाषामें लिखे और उनका श्रम पूज्य पितृचरण एवं गुरु स्व० पं० श्रीवरजीशास्त्रीजी की कृपासे मुझे भी अनायास प्राप्त हुआ है, उसी का एक अंश प्राचीन-नवीन के साथ मैंने गोचारण के रूपमें प्रस्तुत किया है। गोचारणका कुछ अंश मैंने स्व० मामाजी (श्रीवामनदेवजी चौवे) के मुखारविन्दसे भी सुन रखा था, वे सभी भाव माला रूपमें पिरोकर इस अंशके साथ प्रस्तुतहैं। ग्रन्थमें मुख्य दोभाग हैं प्रथम "गोचारण" है, द्वितीय में रूपक व लेखोंका संग्रह है। आकाशवाणी मथुराने भी व्रजभाषा लेखकों को प्रोत्साहित करने का उपक्रम किया फलतः कुछ लेख, रूपक उसके लिये उपनिबद्ध किये थे उन्हें ग्रन्थमें साभार प्रस्तुत किया जा रहा है।

आचार्य जुगल किशोर चतुर्वेदी प्रधानमन्त्री अखिल भारतीय व्रज-साहित्य मण्डल से यह जानकर प्रसन्नता हुई कि वे निकट भविष्यमें व्रज-साहित्य मण्डल का एक समारोह कर रहे हैं अतः मैंने भी शीघ्रतावश मुद्रण की योजना बनाई सौभाग्य से उसी समय मथुरा के ज्योतिषी श्रीरघुनाथप्रसाद सिद्धयोगीने सन्ध्या की पुस्तक पर कुछ लिखने का मुझसे आग्रह किया मुझे इनकी संस्था "भारतीय साँस्कृतिक विद्या-भक्तिसंस्थान" की जानकारी मिलो इन्होने इस ठोस साहित्य की सेवामें बड़ी रुचिली और संस्थाको अमरता प्रदान करने के इस अवसर को उन्होंने पकड़ लिया मेरा भी भार हल्का होगया और मण्डल को भी यश प्राप्त हुआ ।

इस प्रकार के सहयोग के बिना यह कार्य इतनी शीघ्रता में प्रकाशित नहीं होता अतः श्रीसिद्धजी को धन्यवाद प्रदान करना आवश्यक ही है ।

देश के मान्य विद्वान् इतिहासवेत्ता आगरा विश्व विद्यालय के कुलपति श्रीअगमप्रसादजी माथुर ने इस पुस्तक पर भाव व्यक्तकर मुझे बड़ा उत्साह प्रदान किया है और आगरा मंडल के शिक्षकों का ध्यान भी इस वृद्धि को ओर आकृष्ट किया है, एतदर्थ कृतज्ञता ज्ञापित करता हूं ।

मुद्रण कार्यमें चि०सहदेवकृष्ण चतुर्वेदी, एम०ए०आचार्य शोधछात्र ने एवं एम०ए० द्वि० व० की छात्रा कु० वीना शर्मा ने पाण्डुलिपि तैयार करने में जो सहयोग प्रदान किया उसके लिये दोनोंको हार्दिक शुभाशीष प्रदान करता हूं ।

प्रेस के संचालक—श्री रेवती रमन मिश्र को भी धन्यवाद प्रदान करता हूँ जिन्होंने प्राथमिकता के साथ इसे ग्रहण कर प्रकाशित किया है ।

इस यज्ञ में जिनसे सहयोग प्राप्त हुआ है उन सभी को पुनः धन्यवाद प्रदान करता हूं ।

—वासुदेवकृष्ण चतुर्वेदी

—:※:—

* विषय सूची *

क्र० सं०	विषय	पृष्ठ संख्या
	गोचारण (प्रथम खण्ड)	
१	मंगलाचरणम्	१
२	पौगण्डावस्था वर्णन	२
३	श्रीकृष्ण की गोचारण चिन्ता	३
४	यशोदाजी से प्रार्थना	४
५	गोचारण की तैयारी	११
६	श्रीकृष्ण शृंगार वर्णन	१२
७	गो पूजन	१५
८	गोचारण को वन में प्रस्थान	१७
९	श्रीराधा से भेंट	१९
१०	सखी कथन	२१
११	वृन्दावन शोभा वर्णन	२२
१२	धेनुक वध	३०
१३	श्रीकृष्ण का गोचारण कर व्रज में लौटना	३८
१४	गोस्तवः	४०
	(द्वितीय खण्ड)	
१	व्रज भूमि और बाकी संस्कृति	१
२	भगवान श्रीकृष्ण और उनकौ परिवार	७
३	शरद् ऋतु की महिमा	१०
४	श्रीवल्लभाचार्य-व्रज जिनकौ ऋणी है	१६
५	जगद् गुरु श्रीमद्वल्लभाचार्य	१९
६	पुष्टि सम्प्रदाय और श्रीयमुना (महाकवि सूर की दृष्टि में)	२२
७	व्रजरास कौ स्वरूप–पुष्टि मार्गीय ग्रन्थन में	२७
८	सूर सागर औ भागवत	३२
९	कंसे मार मधुपुरी आये (रुपक)	३६
१०	पुरंजन (रुपक)	४६
११	श्रीद्वारकाधीश अष्टक	६३

॥ श्रीद्वारकेशो विजयते ॥

※ अथ गोचारणम् ※

※ मङ्गलाचरणम् ※

राधा सर्वेश्वरन्नत्वा श्रीवराख्यान् गुरूँस्तथा ।
व्रज-भाषाऽमृतं ग्रन्थो वासुदेवेन तन्यते ॥
श्रीवरगुरु के चरन कों करि प्रनाम बहुबार ।
व्रज भाषामृत ग्रन्थ कौ चाहत करन प्रसार ॥

श्री शुक उवाच-

ततश्च पौगण्डवयः श्रितौव्रजे, बभूवतुस्तौ पशुपालसम्मतौ ।
गाश्चारयन्तौसखिभिः समंपदै र्वृन्दावनं पुण्यमतीव चक्रतुः ॥

श्री शुकदेव जी निरूपण करें हैं—कि हे राजन् ! नन्द नन्दन की कुमार अवस्था दूर भई और पौगण्डावस्था आई ।

कौमारं पंचमाद्वान्तं पौगण्डं दशमावधि ।
कैशोरमापंचदशं यौवनस्तु ततः परम् ॥

जन्म दिन सों लैकें जब तक पाँच वर्ष पूरे न होंय तब तक बालक की कौमारावस्था कही जाए है । तदनंतर जा दिन सों छठे वर्ष में प्रवेश करे वा दिन सों लैके जब तक दश वर्ष पूरे न होंय तब तक पौगण्ड अवस्था कही जाय है और फिर १५ वर्ष तक किशोर अवस्था, ताके उपरान्त युवावस्था होय है । सो आप श्री वृन्दावन विहारी प्रभु पूर्ण पाँच वर्ष के है कें और छठे

वर्ष में अर्थात् पौगण्डावस्था में प्रवेश करते भये। यदि राजन् आप कहैं कि कैसे पौगण्डावस्था मालूम पड़ै है सो सुनो, राजन् ! पौगण्ड अवस्था के आते ही सब हाल चाल ख्याल नंदलाल के अदल बदल है गये, देखो जा दिन सौं पौगण्डावस्था को प्रादुर्भाव भयौ ता दिन सें, पहिले हां प्रारंभ किये पढिवे की तरह तो यह गमन (चलनौ) है गयौ, बाल्यावस्था सहचरी (सखी) के विरह सों मलिन मुख हैवे की अनुसरण (संग) करवे वाली की तरह रोमलता (रोमावली) है गई। अरे याकी वो चपलता कहाँ गई। एवं मित्र के वियोगी की तरह कृशता युक्त कटि है गई। अरे अब याकौ वौ बालपन को चापल्य कहां गयौ। या बात को अत्यन्त याद करन वारी की तरह कत्यन्त चपलता को अभ्यास करवे वारी की तरह अति चंचल नेत्र कमल कली है गई। सुकवि की काव्य रचना में 'अस्थानस्थ पदादि दूषण रहित' की तरह सर्वदूषण रहित बोलन है गई। "वसंत ऋतु में पर्व पर्व में चित्र रग युक्त खिलते नवांकुर युक्त तमाल दल की रमणीयता युक्त की तरह" अंग सुंदरता है गई। सूधी हैं के वढ़ती पुष्पमंजरी की तरह तिरछी दृष्टि है गई। हेमंत ऋतु के दिन की तरह क्रमते घटवेवारौ हंसनो है गयौ। वर्षा कर चुके मेघ बिंदु संदोह बूंदन के समुदाय की तरह क्रमते मंद मंद चरण विहार है गयो। कमल नाल के भीतर आच्छादित रत्न-सलाका की तरह काई अपूर्व देवता ते आच्छादित मानस है गयौ। और हे राजन् ! कुमार अवस्था के परिचय (अभ्यास) किये भये को "नहीं किये भये की तरह" विषपान के करवे वारौ ज्ञान है गयौ। अथवा पौगंड अवस्था ने अंग में प्रवेश नहीं कियौ मानौ 'नवग्रहन' ने हू प्रवेश कियौ (तद्यथा) दोनों करतलन में अरुणता ललाई "सूर्य" ने प्रवेश कियौ। मुख विम्ब में (शीरस्मिता) शीतलता "चन्द्रमा" ने प्रवेश कियौ। अनंग में (काम में) अंगारकता (अंगन में व्याप्त होंनों) "मंगल" प्रविष्ट भयौ। कटाक्ष फेंकवे में सौम्यता (सूधोपन) "बुध" ने प्रवेश कियो। श्रोणीन में गुरुता (भारापन) ने 'बृहस्पति" ने प्रवेश कियौ। वचन में काव्यता (कवियन की चतुराई) "शुक्र" ने प्रवेश कियो। पाँवन में शनैश्चरता (धीरे धीरे चलनो) "शनि" ने प्रवेश कियौ। केश पास में (श्यामता) "राहु" ने प्रवेश कियौ और गुण गणन में केतुता (मुख्यता) "केतु" ने प्रवेश कियौ।

अर्थात् पौगण्ड अवस्था आवत ही करतली लाल है गई, मुख बिम्ब में शीतलता है गई, अंगन में कामदेव व्याप्त है गयौ, कटाक्ष फैंकवे में सूधोंपन, वचनन में चतुराई, गमन में धीरता, गुणगणन में मुख्यता, और केशपास में श्यामता है गई। इत्यादि इत्यादि।

पौगंड अवस्था आते ही और ये भी मालूम पड़ी मानों अंगादिकन में परस्पर लुंठकता (लूटनों) अंगीकार करलीयो। सो कहैं हैं-चरणन की चंचलता तो नेत्रन ने हरण करी, मध्यस्थान की गौरवता श्रोणीनमें, ज्ञानकी दुर्बलता उदर में, वचन की चतुराई माधुर्य में आयगई और पौगंड अवस्था न आई मानों अंग में आठौ सिद्धि आयगईं। कमर में तौ अणिमा (पतलापन) श्रोणी तटमें महिमा (महत्वपन) भुजान में गरिमा, वचन में लघिमा (हलकौपन) लज्जामें प्राप्ति, मन में कामावसायिता, लावण्य में ईसता, नेत्रन में वशिता माधुर्य में प्राकाम्य नाम की सिद्धि आय गई। और पौगंडावस्था सों सम्पूर्ण व्रजनगर सुगंध सौ भयो, सब ब्रह्मांड रंजित सौ भयौ। पुष्पधन्वा 'काम' के जन्म को फल संपादन कियौ सो भयौ। श्रृंगार नाम कौ रस शुद्ध कियो सौ भयौ। सम्पूर्णभाव उज्जल किये से है गये। ओर कुलन को वाङ् निर्माण सब कृतार्थ किये से है गये। और जो पौगंडावस्था कौ जन्म भाव परिपाक हो सो साठी चांवल की तरह भीतर पककैं बाहर प्रकाश कीनों। रस की तरह अशब्द वाचक भयौ जैसे रस "शब्दवाच्य" नहीं होय है मुख्यार्थ की तरह लक्ष्य न भयौ, जैसै मुख्य अर्थ लक्ष्य में नहीं आवे और निरूढ़ लक्ष्यार्थ की तरह व्यंगता धर्म सौ भयौ। जैसे निरुढ़ लक्ष्यार्थ में व्यंगता नहीं होय है याही प्रकार पौगंडावस्था होती भई।

या प्रकार पौगंडावस्था कौ उदयभयौ। तब श्री कृष्णबलदाऊ दोनों व्रजराजकुमार, गौ और ग्वालबाल इनकों संमत होते भये, अर्थात् गऊन की यह इच्छा भई कि अबतौ हमकौं सामरौ व्रजराजकुमार नंदनंदन चरावै और बालकन कीहू यही इच्छाभई कि अबतौ सामरौ नंद नंदन ग्वाल होय, तब कछु विहार दीखै। तब एक दिना सब ग्वालवाल अपनी अंथाई पे इकठ्ठे आयकें बैठे, तब नंदनंदन हू वहां आय पधारे, और सबन के बीच आप बिराजमान भये, तब सब बालकन की बतरामन भई, तब आप श्रीकृष्ण बोले—कि भैया! मोकों एक बात कौ बड़ौ दुःख है, तबतौ ग्वालवाल बोले—भैया! तोकौं मैया बाप की ओर को दुःख है, कि खायवे पहरवे कौ दुःख है—कि और काउ बात कौ दुःख है, सौ भैया कहि तौ सही,—तब आप बोले—भैयाओ! मोकों मैया बाप की ओर नेंकहू दुःख नाहिने, परमेश्वर करें मेरे से मैया बाप सबकाहू के हूजो और भैयाओ खाइवे कौहू कछु दुःख नांयहै, मैं तो तुम्हारी दयासों नित्य माखन मिश्री के ही भोजन करौं हौं। और भैयाओ! गहने—कपड़ाकौहू दुःख नायनें, मैं तौ नित्य नई पोशाख धारण करों हौं, टिपार के टिपार, सिंदूखान के सिंदूखा गहने कपड़ा के धरे हैं, मोको काऊ बात

कों दुःख नांहिहै, भैयाओ, मोकों तौ एक बात कौ दुःख है कि एक खेलवे कौ बड़ौभारी दुःख है । हमतौ खेल में लगे होंय हैं और जौलों तांई सेल पूरी नांय होय तौलोंताईं मैया आयजाय है और हाथ पकरकें लै आवे है, खेल हमारौ अध विचूलौ रह जाय है, सो यारौ तुम कहौ सो करें, हम तौ या बात ते वड़े दुःखी हैं । यह बात सुन कें बालकन नें कही, लाल ! हम में तौ आप ही सर- दार हौ, सो जो तुम कहौ सो ही हम करेंगें । जो राह निकारौगे वही राह निकरेगी । तब भगवान बोले—कि भैयाहौ ! मेरी तौ एक सलाह है—कि अब गैया चरायवे चलौ करें, क्योंकि जब दूरवन में चरायवे चलौ करेंगे वहां मैया-बाबा कैंसे आमेंगे ? तब वहाँ अनेक प्रकार की मौज सों क्रीड़ा करेंगे, सो भैया हौ आज रात कौं या बात की सलाह करेंगे, यह बात सुनकें ग्वाल वाल अपने अपने घर चले गये, तब आप हू कृष्ण बलदाऊ दोऊ भैया घर चले गये, वा समय मैया ने व्यारू तयार कर राखी ही, जब भगवान आये तब मैया बोली, लालाऔ ! व्यारू कर लेउ, तब दोनों भैयान कों मैया ने व्यारू कराय वे कों बैठारे, अगारी सोने को थाल धरौ, तामें अनेक प्रकार के कुर कुरे, भुर भुरे, लुच लुचे, पदार्थ मैया ने परोसे, तब दोनों भैया जैमन लगे, तब भगवान बोले मैया ! में एक बात कहूं, मानेगी, तब तौ आप बोलीं, लाला ! तेरी बात न मानों तौ और कौन की बात मानोंगी, तब आप बोले मैया ! मैं तो गाय चरायवे जाऊंगो । मोकों तौ वछड़ा चरायवे में सरम लगे है । तब ज़सोदाजी बोलीं वेटा ! ऐसी धूप में गैया चरायवे कहां जाउगो, तब आप बोले नांहि मैया, मैं तौ जरूर जांऊंगो, तब श्री यशोदा जी बोली ॥

वहवः सन्ति मे गोपाः निपुणाः पालने गवाम् ।
पालयामि स्वयं सर्वान् वत्स कोऽयं दुराग्रहः ॥

अहो लाल जी ! मेरे सेंकरान गोप गाय चारयवे के लिये हैं, ये कौन काम आयेंगे, जिनको मैं रात दिन नौकरी देउ हों, फिर लालजी ! ऐसौ दुरा- ग्रह करनों योग्य नहीं है ! याते लाला ! मैं तौ तोकों अभी गैया चरायवे नहीं जान देउंगी । क्योंकि वन में अनेकन जीव जन्तु रहें हैं, विनते कौन तुमारी रक्षा करैगो ! तब भगवान बोले, मैया ! जहां कोई रक्षा नहीं करै वहां नारायण रक्षा करै हैं, यासों मैया ! मेरी भगवान रक्षा करैगौ । तब यशोदा जी ने कही—हाय मैं अपने लाल कों बन में कवहू नहीं जान देउंगी । कहा सवेरे कौ गयौ संध्या घर आवेगो तब लालजी तेरे मुखेन्दु देखे विन कैसें

जीवती रहुंगी, यासों बेटा ! मैं तौकों गैया चरायवे अभी नहीं जान देंउंगी। तब भगवान बोले तौ लै मैया व्यारू भी नहीं करूंगो, मैंने तौ तेरो खानौ पीनौ भी छोड़ दीनों यों कहिकें गस्सा तौ मारे (खाये) फिर खायवे कों बन्दकर बैठ गये। तब यशोदाजी बोलीं—कि लाल ! व्यारू तो कर लेउ, तब आप बोले कि मैय्या ! न तौ में तेरौ बेटा, न तू मेरी मैया, और न में तेरे घर में रहों, न तेरें खाँउ। तब यशोदाजी ने कही—लाला ! व्यारू तौ कर लेउ, तब आप बोले मैं तो जब खाँउगो जब तू गाय चरायवे की कहि देयगी, तब यशोदाजी बोली मैं तौ नाहीं नहीं करूं, फिर तेरौ बाबा, आय जाय और वौ कहि देय तो तू गाय चरायवे भले हीं चलो जईयो। फिर भगवानने व्यारू करी, और सोय गये आप कों नींद आय गई है, इतने ही में नंद बाबा आय गये तब यशोदा ने थार परोसो है, नंदबाबा व्यारू करन लगे, तब यशोदाजी बोलीं—अजी महरजू ! आज लाला नें व्यारू करवे में बडौ ऊधम कीनो हो, आप लाल कों अपने संग लै जाओ करौ। नंदबाबा बोले—कहा ऊधम कीनौ ? बताओ तो सही, तब यशोदाजी बोलीं-जो एक गस्सा लीनों सोई बोले मैया ! मैं तौ गैया चरायवे जाऔ करूंगो, वछरा चरायवे में तो मोकों सरम लगे है, सो देखोजी मैंनें बहुत समुझायौ, एक न मानी, व्यारू छोड़ बैठ गयौ, तब मैंने तुमारे ऊपर गेर दीनो है, सो तुम लाला कों अच्छी तरह समझाय दीजौ, तब नंदबाबा बोले—वावरो है, काऊ नें बहकाय दीयौ होयगौ, भलौ गैया चरायवे लायक होय तो सही, यशोदा बोलीं-सोतो मैंने सब कह दीनीं, माने नहीं तौ कहा करौं, तब नंदजी बोले—कहा डर है, मैं सब समझाय देउंगौ, आज सोने की घड़ी है सो लाला ने गाय चरायवे की कही तौ सही, जब गैया चरायवे लायक होयगो तब हम आप ही कहि देंयगे—जा लाला गैया चराय ला। ऐसें वतराते बतराते नंदबाबा भी सोय गये तब श्री यशोदाजी और रोहिंणी जी भी व्यारू करिकें सोय गईं। जब सवेरो भयौ—नंदबाबा उठे, उठकें आये तब यशोदाजी लाला को जगायवे गईं। और जाय श्रीकृष्ण कों जगायौ ॥

वत्स जागृहि प्रभातमागतम् कृष्ण जीव शरदां शतंशत ।
इत्युदीर्य सहसा यशोदया, दृश्यमान वदनं भजामहे ॥

पर्यंके न्यस्त हस्तं तदुपरि निहित स्वांगंभाराथ पाणिं ।
श्री कृष्णस्यांगं स्पृशंतीतरकर कमलेनेषदाभुग्नमध्या ॥

सिचंत्यानंद वाणी स्नुत कुच पयसां धारया चास्य तल्पं ।
वत्सोत्तिष्ठाशुनिद्रां त्यज मुख कमलं दर्शयेत्याह माता ।।

हे वत्स ! जागौ, अरे लाला । सवेरौ है गयौ, लालजी अब उठो । और लाख वरस के हूजीयौ, ऐसें कहिकें श्री यशोदाजी वा अल से भये मुखकों देख न लगो । जब भगवान उठे नहीं तब फिर यशोदाजी ने एक हाथ की करतली पर धरें, अपने कपोल के ऊपर हाथ धरें सोय रहे श्रीकृष्ण कू देख और लाला के सब शरीर पै हाथ फेरतीं और दूसरे कर कमल सों पाटी पकर-कमर कों नीची कर, आनंद के आँसूआन सों कृष्ण के अंग कों और स्तनन में सों वहै दूध सों लाला की शय्या भिजाती श्रीयशोदाजी ने कही अहो मेरे लाल जी ! अहो वत्स उठौ, निन्द्रा कौं छोडौ, और अपने मुख कमल कों तनक दिखाऔ, का पुत्र अभी सोते ही रहोगे, जल्दी उठो, ३ सोई भगवान उठ बैठे हैं, यशोदा जी ने श्री कृष्ण कौ मुख धोयौ, शृंगार कीयौ, इतने ही में वहीं अथाँई पै नंदबाबा उठकें चले आये , तो आपहू चले आये हैं, आप बोले बाबा ! मैं तो बछड़ा नहीं चराउंगो, और इन लवारेन के पीछे लटकतौ-लटकतौ कव तक डोलुंगो, सो बाबा ! मैं तो गाय चरायवे जाऊंगो, यह सुनकें यशोदाजी बोली-- थू थू थू इन निगोडीन निगोडेन की आँखिन में राई नोंन चना को चून चटर-मटर मेरे लालाकों स्यानों-समानौ बतामें, अबी मेरे लाल के दूध के दांत भी नांय उखरे । अबी तेरी बलाय गाय चरावे । अरे मेरे लाल धूप में गाय चरायवे कहां जाउगे, यह कहि यशोदाजी ने नंदबाबा सों कही, तुमने हीं लाल कों ढौरी लगाई है, यह सुनकें नंदबाना बोले---मैं तुम्हारे शरीर पै साध धरि के कहूँ हूँ मैंने कछु चर्चा भी करी होय तौ, यह नंदबाबा लाल को गोद में धरि, सिंह पौर के बाहर आय गये । बाहर चोंतरा पै बैठ गये हैं और हू गोप आय गये हैं, तब तौ बाबा की गोद में आप मचल गये, बाबा ! मैं तो गाय चरायवे ही जांउगो, नंदबाबा ने बहुत मनाये, वहुत समझाये, और कही लाला तू अभी गाय चरायवे लायक नहीं है ना बाबा में गाय चरायवे लायक हूँ, यह कहिकें गोद में ते ठाड़े है गये, और दोनों हाथ ऊँचे उठाय कहन लगे कि बाबा ! देखो मैं इतनौ बड़ौ है गयौ, मैं अब गाय चराइवे लायक नहीं हूँ ? तब नंदबाबा हँसे और कही कि हां मेरे बाबा ! तू इतनौ बड़ौ तो है गयौ, फिर ये तौ वताय ये नोकर कहा काम आवेंगे, जो तोकों गाय चरायवे कों भेजों, तव भगवान बोले—हां बाबा ! ठीक है जाकें टहलुआ होंगे वे काहे को

कछु काम करते हैं यगे, जो टहलुआ हैं तौ बाबा काहे कों कबू तुम गाय चरायवे गये होउगे, इतनी कहिकें, आंखन में आंसू भरि लाये। तब बाबा ने कही बेटा! अभी तेरी कहा उमर है तू अभी कितनौ है चारि दिन बाद अच्छी तरह गैया चरैयो। तब भगवान ने कही—सुनो बाबा! यह सब जानत हैं कि पांच बरस कौ बालक रहे है तब तक कोऊ कछु वासौं काम नहीं करावें, और बाबा! छटी वर्ष में लगौ सोई ब्राह्मण तौ बाकों पढ़वे बैठार देय हैं। क्षत्री लोग तीर कमान चलायबौ सिखावें हैं। और बनियां वाकों कौड़ी बेचवो या खोमचा में लगावें। और शूद्र लोग नौकरी में लगामें सो बाबा हमारे गायन के सिवाय कछु और काम नहीं है अब हूँ गैया चरायवौ न सीखोंगो तो कब सीखोंगो, आखिर सब काम मोकों सोंपौहीगे फिर सब काम मैं हीं करूंगो और कौन करैगो, तब बाबा ने कही बेटा, हार जाउगे, चलौ नहीं जाइगो। तब भगवान ने कही अच्छो कहा डर है जो मेरो नाम कन्हैया है तो तेरे ही म्हौडे ते कहिवाय देंउगो, मेरे हू अब यह निश्चय है और मैं जानूं हूँ मैया-बाप ने आपस में इसारत कर लीनी है, नंदबाबा बोले बेटा तू तौ बड़ौ समझदार है गयौ है। लाला ऐसी बात नहीं करनीं जाते दांत पै धरे जाउ, काऊकी नजर लग जायगी, तब कोई रोककें गोप बोलौ—नंद! भैया! तू बड़ौ भाग्यवान् है, तू अपने भाग्य कों सराहना कर, भैया तेरें बेटा भयौ और सपूत भयौ, भैया! अब कसर कहा है, सो अब जल्दी डंका दै कें ब्याह करकें, अपनौ जीवन सफल कर, अपने बेटा कों सब काम काज सौंप दै, फिर माला लैकें भगवान कौ भजन कर, और लाला सों कहि दै—लाला तू जाने तेरौ काम जाने। ऐसो बेटा तेरौसौ बड़े भागन सों मिलै है॥ और मेरे बेटान कों देख—बीस-बीस पच्चीस-पच्चीस बर्ष के (धींगरा) है गये फिर अब तक न तौ कोई काम, तऊ ऊधम करें हैं। घर के काम-काज के लियें तो चिरी अंगुरीया पै भी नहीं मूतें हैं। और एक दमड़ी, दाम कौ कभी साग ताई भी नहीं लाइ के धरें हैं और कमाई करनौ तौ जहाँ-तहाँ रह्यौ, यासों अच्छी बात तौ है जो ये गऊ चरायवे कों मचले है तौ तू लाला कों जान क्यों नहीं देय तब नंदबाबा नें कही—भैया! चलौ बस्स ढौरी मत लगाऔ, गाय चरायवे लायक होय तौ सही। तब श्रीकृष्णनें कही—सुनो गोपौ! जौ मेरो नाम कनूआं है तो ये ही बाबा १० बेर कहै और खुसामद करै और कहें जाओ लाल! गऊ चरायवे जाओ तवही जाउंगो, देखौ तुमहूँ मेरी करामात कों देखौ, यह कहिके नंदबाबा की गोद सों उठकें दो-चार यार जो

आय गये सो उनके संग खेलने कों चले गये। अब सुनों जो गोपन कें गाय घेरवे को समय भयौ सोई अन्तरयामी ने ऐसी माया कीनी, गोप मुकती हीं गौपन कों चरायवे कों घेरे हैं फिर गैया तौ ब्रज के गौडन से अगारी पांय नहीं धरें हैं। ये गोप लाठियों सों पीट-पीट के हार गये और कंकड़ी मार-मार नंद की पौर पे भाग आमें गोपन की नाक में दम है गई है पर गैयान ने कन्हैया के बिना ब्रज के बाहर एक पांव भी नहीं धर्‍यो है। तब सब गोप घबरायकें नंदबाबा के पास आय बोले, भैया ! तेरे लाला कन्हैया ने गैयान पै कछु ऐसो टोना कीयौ है सो भैया ! गैया तौ ब्रज के बाहर ही नहीं निकसें। अब कहा करें। हमतौ हार गये। तब नन्दबाबा एक गोप ते बोले-- अरे भैया ! नेक कन्हैया कों बुलैयो, सोई भगवान आय गये। और कहीं क्यों बाबा कहा ! काम है, तब नन्दबाबा बोले--भैया कन्हैया ! तू जीतौ और गोपन सों कही भैयाओ ! लालाकों ले जाओ, तब सब गोप कृष्ण कों लै गये, तब सब गाय ब्रज के बाहर निकसीं। तब फिर नन्दबाबा बोले लाला तोसों गैया बड़ी हिली-मिली हैं। तब भगवान् बोले---बाबा ! तब ही तौ मैंने तुमते कही ही, तब बाबा बोले--- अच्छो बेटा ! जैयो गैया चरैयो, तब आप बोलो—मैं जाऊं ? तब बाबा बोले---बेटा ! तौ बड़ो जल्दीबाज है, भलौ बिना मुहूर्त कैसे जाउगे। अब ब्राह्मणन कूं बुलवाऊं वे कोऊ मुहूर्त देखकें बतामें जब जैयो। आप बोले--तो मैं बुलाय लाऊं, बाबाने कही-तू कहा बुलावेगो, मैं अबही बुलवाऊँ, वाई समै बाबा ने एक टहलुआ कौं बुलवायकें कही अरे सेवक ! तू जायकें सब पंडितन कूं बुलायला और कहियौ कि तुमकूं नन्दबाबा नें बुलायौ है, सो तुम चलौ, और अपने पोथी पत्रानकूं भी संग लै चलौ। सेवक उठ गयौ और पण्डितन के पास जायकें बोल्यौ कि पंडितजी ! आपकूं नन्दबाबा ने जल्दी बुलायौ है और अपने पोथी पत्रानकूं भी लै चलौ। बस सब इकट्ठे है कें पंडित लोग पोथी पत्रानकू लेकें चल दिये। बाबा कौं आसीश दिये।

बाबा ने उनकूं दंडवत प्रणाम करी, और कही कि आओ महाराज विराजौ। जब सब ब्राह्मण बैठ गये तब बाबा ने सबकूं एक-एक नारियल और सोने की ५-५ अशरफी भेंट करिकें प्रार्थना करी कि भैया विद्वानों ! लाला कनुआ गैया चरायवेकूं मचल रह्योए सो याकौ कोई गाय चरायवे कौं अच्छौ मुहूर्त देखिकें लग्न घड़ी, चन्द्रमा देखिकें बताओ, या लालाकूं कोई विघ्न न आवें सो यह सुनिकें सब ब्राह्मण विचार करन लगे, मुहूर्त देखिकें

बोले—बाबा ! जल्दीकौ मुहूर्त निकासैं कि देरकौ, सोई झट श्रीकृष्ण बोले—पण्डितौ झट को निकासौ। पण्डित बोले—मुहूर्त तो ऐसौ बनौ है जैसो कहा कोई दूसरौ बनेगौ, भगवान् बोले—कौन सो ? पण्डित बोले—कार्तिक सुदी अष्टमी, बुधवार, श्रवण नक्षत्र में, प्रातः तुला लग्न में घरसों गाय चरायबे कों निकलनौ सर्वश्रेष्ठ मुहूर्त है। ऐसो उल्लेख पद्म पुराण में आवै है:—

कार्तिके शुल्क पक्ष तु स्मृता गोपाष्टमो बुधैः।

तद्दिनाद् वासुदेवोऽभूद् गोपः पूर्वं तु वत्सपः॥

बाबा याहीसों या अष्टमी कौ नाम गोपाष्टमी है गयौ है। ये सुनिकैं बाबानें आज्ञाकरी-ले लाला ! अष्टमी बुधवार कूं गाय चरायवे जइयौ। और ब्राह्मणन ते कही आप लोग सब अष्टमी के दिन प्रातःकाल ही सब पूजापत्री करायकें लग्न सधवाय दीजौ।

ब्राह्मण बोले—बाबा ! तू बे फिकिर रह, सब हम करवाय देंयगे। अब हम जायें हैं। ब्राह्मण नन्दबाबा कों आशीर्वाद दैकें चले गये।

अब तौ भगवान् बड़े प्रसन्न भये और वाही समय आप अपने सखान के पास गये और कही भैया औ ! आजतौ काम फते कर लायौ सखा बोले—लाला ! कहा ? श्रीकृष्ण बोले--भैयाहौ कार्तिक सुदी ८ कौ गाय चरायवे कौ मुहूर्त निकसौ है, और तुमहूं अपनौ मुहूर्त दिखाऔ, यह सुनकें सब सखा अपने-अपने घर चले गये। जायकें अपनी-अपनी मैयानसों बोले—कि मैया ! नन्द के लालाको कार्तिक सुदी ८ कौ गाय चरायवेकौ मुहूर्त निकसौ है, सो हमहूँ सब गाय चरायवे जांयगे, तव छोरान की मैयान ने कही तुमहूँ मुहूर्त दिखवाऔ, बिना मुहूर्त कैसें जाउगे, तब छोरा बोले—मैया ! हमारौ कृष्ण के मुहूर्त में ही मुहूर्त है, हाथी के पांय में सबकौ पांय होय है। ऐसे कृष्ण के मुहूर्त में हमारौ मुहूर्त समजलीजो, इतनी बात पीछे सब ग्वालबाल नन्दलाल के पास आये और बोले—लाला ! हमने तो यही निश्चय कियो है कि तेरे मुहूर्त में ही हमारौ मुहूर्त है। अब हँम मुहूर्त नहीं दिखामेंगे। तब भगवान् बोले—अच्छौ भैयाहौ ! तुम सबजने मिलकें सबेरें ही आय जैयो, यह कहिकें भगवान् घर कों गये, और सखा अपने-अपने घर कों गये और मैया बापन ते कही कि अब हम गाय चरायबे जाऔ करेंगे। तब गोप बोले—बेटाऔ ! अबी गैया सींगन पै धरिकें फेंक देंयगी, सखा बोले—जब

कनुआं गाय चरायबे जायगो तब हमका मौडों देखेंगे, कि घरमें बैठे रहेंगे। तब गोप बोले--ब्रोतो राजा कौ बावरौ है जो चाहें सो करे। तब छोराननें कही हम बाके उस्ताद हैं, बौ हमारौ पट्ठा है! एक बालक बोलौ मैं तो बामें चार पटक मारूं। दूसरो बोलौ--मैंने बाकों कलही कुस्ती में मारौ है। तब गोप बोले--अच्छी वात तुम्हारी एसी मरजी है तौ तुमहूं नन्दलालके संग गैया चरायबे जैयो, हम नाहीं नहीं करेंगे। तब सब ग्वालबाल अपने-अपने घर में सोए, जब सबेरौ भयो सोई सब ग्वालबाल भगवान् के सखा मिलकें नन्द के महलकों चले गये।

तावद् गोभट भद्रसेन सुबल श्रीकृष्णतोकार्जुनः।
श्रीदामोज्जलदाम किंकिणि सुदामाद्याः सखायो गृहात् ॥
आगत्य त्वरिता मुदाविमिलिताः श्रीसौरिणः प्रांगणे।
कृष्णोत्तिष्ठ निजेष्ट गोष्ठमग्रभो इत्याह्वयन्तः स्थिताः ॥

गोभट भद्रसेन, सुबल, तोक, श्रीदामा इत्यादि सब बालक मधुमंगल के पास गये और कहन लगेः--

ही ही प्रभातं किमुभो वयस्या अद्यापि निद्राति कथं सखानः।
तद्बोधयाम्येनमितीरयन्स्वात् तत्प्रागुदस्थान्मधुमंगलोऽपि ॥

ओ मधुमंगल २ सबन्ने हल्लाकियौ तब मधुमंगल खाट पै सों आंख मींडतौ बोलो--मित्रौ! कहा सबेरौ है गयौ, ये कहतौ उठौ और सब मिलकें नन्दपौर पै आये और बोले--अरी मैया! कन्हैया कों जगायदै, जशोदाजी बोलीं--भैया हौं! मैं तौ कच्ची नींद में कन्हैयाकों कभी नांय उठाउंगी। मुकती नांई करी फिर छोरा कौनकी मानें, हल्ला करन लगे। हल्ला सुनकें दाऊजी आंख मीडते उठे, उठकें छोरानके पास आयगये। तब छोराननने कही राजा भैया ये तौ दाऊहै और लालाकौ तौ पतौ भी नाएं जानें कहां सोय रह्यौ है। इतनेही में कछु-कछु उजेरौभयौ तब श्रीव्रजरानी अचक सीना शयनस्थान पै गई, सोई मधुमंगला आदि सौं लैकें सब सखाहू यशोदाके संग गये। मधुमंगल तौ पलंगके नीचे सोयगयौहै, औरसब 'ग्वालवाल' चारों ओर ठाड़े है गये हैं, यशोदाजीने मुख पै सों पीताम्बर हटायौ, मुखचन्द्र कौ दर्शन कीनों ग्वालबालननें भी दर्शनकीनों है खूब नींदके घर्राटेआयरहे देख मुख ढक दीनों।

सब बालक चित्रसारी में बैठगये हैं। थोरी देर पीछे सूरज निकस आयौ, तव यशोदाजी बोली:—

जहि जहि जहि निद्राँ कृष्णसूर्योदयस्य ।

झटिति भवति वेलां प्रेक्ष्य तल्पं जहाहि ।।

तव सकल वयस्याः संस्थिताः द्वारदेशे ।

किल हरिमिति गोपी बोधयंतं प्रभाते ।।

लालाजी २ उठो, सूरज निकसआयौ, गऊ चरायवेकी लग्न टर जायगी, सोई प्रभू उठे, नेत्रनकूं मींडन लगे, जँभाई लेंनलगे, यशोदाजी चुटकी वजावन लगीं, प्रभूने धीरे-धीरे आलस्य छोड़ौ, नेत्र खोले, इतने ही में मधुमंगला प्रभु के पलंगके नीचेसों बर्रायौ, लड्डूखाऊं, पेराखाऊं, खीर खीरखाऊं, रवड़ीखाऊं, सिकरन के सड़प्पा उड़ाऊं, कबऊ न अघाऊं । सोई तौ कृष्ण हंसनलगे, आपबोले—रे मधुमंगला ! सारे तोकों सोयबे में हूँ खायबौ २ ही दीखे । ऐसें कहि हाथ पकर पलंगके नीचेसों निकारौ होस करायोहै । तब मधुमंगला बोलौ—यार ! भले बखतमें जगायौ, खीरके सड़प्पान के उड़ायबे की तैयारी हैरहीही, सोई यारतेनें हमकों जगाय दीयौ । तब भगवान्‌बोले—ब्राह्मणनकौ सोयबेमें हूँ खायबौ दीखै, सारे घबरावै मती, सांचे सुड़प्पा उड़ैयो । जासों तेरौ पेट भरै, ऐसें कहि पलंग पैसों उठे, यशोदाजी सोंनेकी झाड़ी में जललाई आपकौ मुखधोयौ, दातुन कराय, अपनी साड़ी सों मुख पोंछो, दर्पन दिखायौ, तब आप मित्रनके पास आयेहैं—सवसों राम-राम करी, तब मित्रवोले—यार ! तू तौ सिदौसी उठन कहितो सो अब उठकें आयौ है ? आपबोले– यार ! नींद आयगई । सखाबोले– अब कहो कहाकरें ? भगवान् बोले—अब अपने-अपने घर जाउ, अपनौ और गैयानकौ शृंगार करिकें जल्दी आयजाउ ।

ग्वालननें जायवे की तैयारी करी सोई यशोदाजी बोली—बेटाओ ! कहाँ जाऔ ? तब बालक बोले—मैया घर जाऐं, अपनौ और गैयनको शृंगार करिआमें और कछु कलेऊ करिआमें, यशोदाजी बोलीं—कलेऊ मत करियो आंज तुम्हारो गऊ चरायवे कौ नौतो है, सो यहीं भोजन करियो, तव बालक अपने घर गये, और अपनौ और गैयनको शृंगार कीयौ, यहाँ यशोदाजीनें आपकौं उठायौ, माखन मिश्री खवायौ फिर सब अंगनमें मंगल उबटनौं

कीनों। गरम सुगन्धित जलसों स्नान कराय अंचलसों अंग पोंछ श्रृंगार कीनों । प्रथम तौ बहुत चुचांमते रंगकौ पचरंगी चीरा अलबेलौ जामें पेच लटक रह्यो व्रजवासीनन साही माथे पै बांधौ, ताके ऊपर रत्नजटित मुकुट बांधौ, ताके ऊपर सिरपेच, ताके ऊपर कलंगी, धारण कराया हैं। नीचे बहुत हल्की रेशमी पीरे रंग की मोतिन के काम की अंगरखी और जरी के काम कौ पायजामा धारण करायौ है। ताके ऊपर काछनीं कसी है। ताके ऊपर फेंटा, ताके ऊपर एक पटका, वाकौ छोर एक इतमें, एक उतमें लटक रह्यौ है। फेंट में बंशी, हाथ में अमेंठमा कड़े, भुजामें फंसेमा वाजूबंद, पांयन में नूपुर झांझन कड़े, गले में जड़ाऊ हार वैजयन्ती माला, बनमाल, नेत्रन में बड़ौ-बड़ौ काजर, बाँई बगल कारौ डिठौना लगाय, श्रृंगार कर मैया ने अपनी एड़ी की धूर चटाई, राई नौन उतारौ, तिनका तोरौ, बलैया लीन्हीं। इतने में ही रोहिणी जी बोलीं—"जिठानीजू ! रसोई तैयार है।" सोई यशोदाजी बोलीं—"बेटाऔ ! आऔ !" इतने में ही सब ग्वालबाल अपने २ घरन सों श्रृंगार करिकें आयगये। सबकौं संग लै आप भोजन कों बैठे।

श्रीदामसुवलौ वामे पुरोऽस्य मधुमंगलः

दक्षिणे श्री बलश्चान्ये परितः समुपाविशन् ॥

श्रीदाम, सुबल बाईं ओर, मधुमंगल अगारी, दाईं ओर दाऊजी और सब सखा चारौं ओर बैठगये, बीच में भोजन कों भगवान् विराज गये तब यशोदाजीनें सोने के थार में अनेक प्रकार की सामग्री परोसीं अनेकान प्रकार के कुरकुरे-भुरभुरे माल परोसन लागीं। सब भोजन करन लगे। जब व्रजरानीने अनेक तरह के नुकती के, करनसाईं के, मुठियाके, चूरमाके, खोआ के, बेसन के, पिस्ता के, बदाम के, पचधारी के मोदकनकौं, लैके यशोदाजी लावें, और कहें—ले लाला ! आप कहें, मोकों नाँय चहियें, मोय नांय भावें। तब मधुमंगल बोलौ—अरी मैया ! यहाँ लाउ लड्डुआ तौ मोकौं भावैं लड्डुआ खाइवेकौं तो भगवान्ने हमकूं बनायौ है। तुम कहा जानौ खाइवौ। मैया इनकों तो इमलीकी चटनी भावै। इतने में ही खीर आई। लेऊ लाला ! खीर खाऔ। सबनकूं खीर परोसी। मधुमंगल कों नांय परोसी तब मधुमंगल बोलौ—कैसी अपने लालाए गुपचुप परोसी है। और हम पै डेल से पटक दीने हैं। रामकरै ऊपर सौं पटिया परै। तब यशोदाजी बोली—पटीया परेगी तौ तू कहाँ बच जाइगौ ? तब मधुमंगल बोलौ—और

कहा ! जैसें या खीर सौं बचगयौ वैसेंई पटीयातें बचजाऊंगो। यशोदाजी बोलीं—निगोड़ी के तूतो वामन है, खीर खाइगौ तौ जनेऊ उतर जाइगौ, याते नांय परौसो। तब मधुमंगलबोलौ—लै मैया ! ऐसे घीके बाप जनेऊ सौं धायौपूरौ, जो खीर कौ रोके है। ऐसें कहिकें अपनी नार में सों जनेऊ उतार कृष्ण की नार में गेरदीनों, और कही लै मैया ! ला मोकूं खीर परोस। ओर जनेऊ बारे को मत परोसै। यशोदाजी बोली—निगोड़ी के, यह तौ मेरौ बेटा है। मधुमंगल बोलौ--मैं का तेरौ दुश्मन हूं। यशोदाजी बोली—लै याकौं खवाऊंगी तौ मेरौ बेटा मोटौ होयगो। तब मधुमंगल बोलौ—अरी मैया ! आखिर तू गंवारी है। अरी बावरी ! खबावैगी मोकों, खाऊंगो मैं, तेरौ लाला मौटो होयगो ? यशोदा ने कही—ऊती के ! ये कैसें ? तब मधुमंगल बोलौ—मैया ! देख मैं खूब खाय अपनी थोंद याकी थोंद सौ मिलायदूंगो सोईहैजाइगौ तेरौ लाला मोटौ।

"वीक्ष्य यत्नान्वितामंबां मंदमश्न न्तमच्युतम्।
परिहास वटुस्तस्मिन् व्रजेशामवदद्बटुः ॥
अयं चेद् भूरि नात्यम्ब देहि मे सर्वमप्यसौ।
मयैवालिंगितः पुष्टो भविता भूरि भोजनः ॥

भोजन करवायबेमें यत्न करवे बारी माता कौ देखकें, और भगवानकों थोरौ खातौ देखकें मधुमंगलबोलौ—मैया ! कृष्ण नाँय खायतौ मोकूं परोसदै। मेरौ ओर कनुआं कों दोउन कौ परोस दै, फिर खूब भोजन करिकें कनुआं को आलिगन कर लेउंगो, सोई कनुआं मौटौ है जावैगो।

चर्व्यन्ति चर्व्याणि मृदूनि केचित, लेह्यानि चान्ये चटुला लिहन्ति।
पिबन्ति पेयानि परे प्रहृष्टा, श्चोष्यन्ति चोष्यानपरे प्रहृष्टाः ॥

कोई पापरन कौ खावै, कोई चटनी खावै, कोई दूधन कौ पीवै, कौई माखन चूसै, कोई लड्डू खायै, कोई बरफी खायै, कोई रबड़ी पीवै, कोई कछु खाय कोई कछु, कहाँ तक वर्णन करें ! जब सब भोजन कर चुके तब कृष्ण के थाल में सब पदार्थन कौ पड़ौ देखकें यशोदाजी बोलीं—

"यत्नात्संस्कृतमन्नादि सर्वंत्यक्तं त्वयासुत।
क्षुधितोसि कियद् भुङ्क्ष्व शपथः शिरसो मम।

देख लाला ! मैंने कैसे जतन सों मेंहनत करकें सब पदार्थ वनाये, अरे बेटा ! तैनें सब ज्यों के त्यों ही छोड़ दिये । लाला ! अबई तू भूखौ होइगौ । तोकों मेरे शिर की सौगंध है, तू कछु तौ खा । कृष्ण बोले—अब नांय खाऊंगो मैया ! शुकदेवजी कहैं—राजन् ! या आनन्द कौं वे ही जानें जिननें देखौ होयगौ, और कोऊ कहा जानैं, या समय वर्णन करिवे में नहीं आवै है, ऐसे जब सब भोजन कर चुके तब उठे, हस्त प्रक्षालन कीन्हौं, हाथ-मुख यशोदा जी नैं आंचल सों पोंछे। आप यशोदा मैया के अगारी बैठे हैं। यशोदाजी ने अतरदान मंगायौ, कृष्ण के बारन में अतर गजा डारे हैं। कंघी सों वारन कों वहायके बारन के तीन भाग करिकें बीच २ में चमेली के फूल गुहिकें एक चूरा बांधौ है हाथन में रत्नजटित कड़े, फेंटमें सींग खुरसौ। बांइ बगल में वंशा खुरसी। बगल में कारे कंबल की छोटी सी खोर लैकें तैयार भये। सखा बोले—लाला ! वड़ी देर हैगई । आप बोले—कछु अवेर नांयने भैयाऔ। तब गौ पूजा करी, और चले, तब वा समयः—

"शृगं वामोदर परिसरे तुंगवाद्यान्तराले ।
दक्षे तस्मिन् निहित मुरली रत्नचित्राँ दधानः ।।
वामेनासौ सरल लगुडी पाणिनाँ पीतवर्णी ।
लीलाम्भोजांश्चकित नयनश्चालयन् दक्षिणेन् ।।"

कमर में बाईं बगल रत्नजटित मुरली, बाँये हाथ में सोने की मूंठकी छड़ी, दायें हाथ में नीलकमल लैकें तैयार भये, सोही दाऊजी कौ जाननौ नीलाम्बरकौ भेद है। वा समयवाकी झांकीकोवरने, दोऊ मैयानने कृष्ण-वलराम की वलैया लीनी, तब आप बोले—मैया ! पूजा करावन वारे प्रोहित नहीं आये। सोई यशोदाजी ने बैठक में सों प्रोहितजी बुलाये। ब्राह्मण आये। यशोदाजी ने डंडौत करी। और सोने के थार में रोरी, मौरी, सुपारी, पान, धूप, दीप, पेड़ा, लड्डू, दक्षिणा, फूलमाला, धोती, दुपट्टा आदि सब पूजा की सामग्री लै आईं। गोबर कौ चौका लगाय, पचरंगकौ चौक पूर कैं ताके ऊपर रत्नजटित दोपट्टा डार कें, मखमली सुनेरी काम की गद्दीकुसासन पैं बिछाकें, दोनों भैयान कूं पूर्वाभिमुख वैठारे हैं कलश स्थापन कर व्रह्मणन नें पुण्याह वाचन कराय, नवग्रह, दश दिगपाल, पंचलोकपाल, षोडश मातृका, कुलदेवी, आदि सबकौ षोडसोपचार, पूजन करवायौहै । नौवत नगारे बजन लगेहैं। अरोसन-परोसन नेह गामकी सब गोपी मंगलगीत गामन लगी

हैं। जब सब पूजा है चुकी तब ब्राह्मण बोले—गऊ कहाँहैं ? बुलवाऔं, सोई ग्वारिया गैयनकौं लाइवे चलनलगे। सोई कृष्ण बोले—भैयाऔ! तुम क्यों जाऔं ? मैं अभी बुलाय लाऊंगो। सोई आपनें सिंहपौर पै ठाड़े हैकें गैयान कौ नाम लैकें गैया बुलाई हैं।

"मुक्ते नन्दिनि चन्दनोन्दुतिलके, कस्तूरि कर्पूरिके ।
पिङ्गे रिंगिणि धूमले धवलिके किंजल्किके रागिणी ।।
श्यामे केतकि नन्दिके शवलिके काश्मीरिके चंपिके ।
ह्री ही हीतिततान तान मधुरं गानं मुरल्या हरिः ।।
गंगे तुंगि हिही पिशंगि धवले कालिंदि वंशिप्रिये
श्यामे श्येनि हिही त्रिवेणि यमुने चन्द्रालिके नर्मदे ।।
नाम ग्राहमयं समाह्वयति गाः प्रेमोत्थमोशोगवाम् ।

हे मुक्ते! हे नंन्दिनी! इत्यादिक नामसों कारी— कामर, धौरी, धूमर हीयो-हीयो कह्यौ। श्रीशुकदेवजी कहैं–राजन्! कृष्ण-कन्हैया वलराम के भैया, यशुमति के छैयानें जो गैया बुलाई, सोई तौ पूंछनकौं उठाय हूँ-हूँ करती केकड़ो मारकें, गैया सब कन्हैयाके शरीरकूं चाटनलगी। तब यशोदाजी बोलीं–बेटा! तोपै गैया बुलाइचौ तौ आवै है। आपबोले—मैया! अभी कहाहै, आजतौ पहलौ ही दिनहै। अगारी देखियो मैया, गैया मोते सब हिल रही हैं, और मोसों बड़ौ प्यार करैंहैं। तब ब्राह्मणने हाथ जुड़ाये हैं, और बोले:—

"या लक्ष्मीर्लोकपालानां धेनुरुपेण संस्थिताः ।
घृतं वहति यज्ञार्थे मम पापं व्यपोहतु ।।
अग्रतः सन्तु मे गावो गावोमे सन्तु पृष्ठतः ।
गावो मे हृदये सन्तु गवां मध्ये वसाम्यहम् ।।

इत्यादिक मंत्रन कौ उच्चारण कर प्रथम गऊन के चरण धुवाये हैं, माथे पै रोरी के तिलक लगवाये हैं, गले में फूलमाला, हार, पहिराये हैं। अगारी थार में भरकें लड्डू, जलेबी खवाये हैं। कपूरसों नीराजन कीनौ है। माता श्रीयशोदा नें गऊन के खिरकमेंसों रज लैकें लगाई है, और प्रार्थना कर रही है—गैया मैया हो। तुम मेरे कन्हैया की लाहनी-पाउनी हूजौ और मेरे लालानकों बार २ रक्षा करियो। अब ब्राह्मणन कों वस्त्राभूषण दे विदा कीन्हें हैं। दाऊजी कों कृष्ण कौ हाथ पकराय बोली—

"शृणु बल मम वाक्यं बालकानां बलीत्वं।
गिरि जल वन मध्ये रक्ष कृष्णं मदीयं ॥
इति हलधर पाणौ कृष्ण पाणिं निधाय।
गलित नयन धारा नन्द जाया पपात् ॥

हे बलदेव ! मेरे वाक्यकों सुन, पर्वत, जल, बन की जगहमें मेरे कृष्णकी रक्षा करियो। बेटा तू ही सब बालकनमें बली है। तेरे ही भरोसे मैंने लालाकों गैया चरायवेकौं भेजौ है। ये कहिकें अपने हाथसौं बलदेव जी के हाथ में कृष्ण कौ हाथ धरौ। नन्दरानी वात्सल्यरस में मग्न हैकें धरती पै गिर परी, और कही--बलदेव ! ये कनुआँ तेरी गोद मेंहैं, तू जाना तब रोहिणीजी नें पकरकें बुलाई, और बोलीं—जिठानीजी ! तुम बावरी हो, भलौ ये समय मन मैलौ करिवे कौ है कि हंसिवे कौ। यशोदाजीने माथे पै तिलक कियौ ४ लड्डू दीने, आज्ञादीनी, फिर आप पधारे, कंसेंपधारे—आगें-आगें गैया, तिनके पीछें बछरा बछिया, ताके पीछें कृष्ण-बलराम दोनों भैया, ताके पीछें नन्दबाबा और यशोदा मैया, ताके पीछें अनेक बाजे बजैया, ताके पीछें प्रेमी गोपी–गोप रिझवैया ताके पीछें गवैया, या आनंद रीति सौं व्रज के गोंड़े सों बाहर आये, तब आपनें मैया सौं कही—मैया ! तू अब मत आवै, तू अब जा, तब यशोदाजी खड़ी है गईं और कृष्ण कौ हाथ पकरकें बोलीं:—

वत्स ! थावर जङ्गमेणु विचरन् दूरप्रचारो गवाम् ।
हिंस्रान् वीक्ष्यपुरः पुराणपुरुषं नारायणं ध्यास्यसि ॥
इत्युक्तस्य यशोदया मुररिपोरव्याज्जगन्ति स्फुरत् ।
बिबोष्ठद्वय गाढ़ पीड़नवशादव्यक्तभावस्मितं ॥

अरे मेरे बेटा ! देख, बनमें गाय चरायवे तौ जायहै फिर ये गैया-बछरा-झारफूकरेनमें, बनमें, पर्वतन की खोहनमें, बेटा चरती डोलें हैं, सो तू बेटा ! बा समयमें नारायण कौ ध्यान करियो। और जो सिंह बघेरन कों देखै तो नारायण को ध्यान धरियो, तब आपने कही—हूँ अर्थात् मैया नारायण का कोई और थोरेई है। नारायण वौहूँ नाम मैं हीं हूँ, यह सुनिकें मैयाकों वात्सल्यरस कौ प्रवाह उमगौ तब कृष्णकौं छातीसौं लगाय, अंसूआं लाय यह बोलीः—

वालोसि मृदुलस्तत्र विमुक्तश्छत्रपादुकः ।
दिनं भ्रमति कान्तारे जीवेत पितरौ कथम् ।।

लाला ! तू बालक है और ताहूमें अति कोमलहै, इतने पै हू दिनमें डोलैगौ । फिर लाला तू कहितौ सही, तेरे बाबा और मैं कैसें जीवित रहेंगे, सो बेटा ! गायचरायबेकौ मुहूर्त हैगयौ, लालजी अब घर चलौ, बनमतजाउः—

शतशः सन्ति मे गोपा निपुणाः पालने गवाम् ।
चारयामि स्वयमहं वत्स कोयं दुराग्रहः ।।

क्योंकि मेरें गऊचरायबेमें निपुण सेंकरान गोप हैं, वेटा तू बिना छाता जूतीके वहां नंगेपैर कैसें डोलैगौ ? कोई कांटो, खोबरौ या बनकौ ठूट लगगयौ तो लाल कहा करूंगी, जो लाल तू बनकौंही जायहै तो देख ये सुन्दर चमकीली जूती और ये छोटीसी छत्री तो लैजा, नहीं तौ लाला मैं फिकरकेमारें मर जाऊंगी । यह सुनकें कृष्ण बोले—मैया ! तू बड़ी बाबरी है, बताय मैं बनमें जूती-छत्री कैसें धारण करों ।

'न मातः छत्रपादुके" ।
यथा गावस्तथा गोपास्तर्हि धर्मः सुनिर्मलः ।।

देख मैया, ये गौ सेवाही हमारी देवताहैं, हम गौअनकी सेवा करबे वारेहैं या कहूँ ऐसौहैसकै हमरौ इष्ट तौ पांयन और घाममें और अपुन नौकर चलैं पनहीं पैर छत्री लगायकें ये बात योग्य नहीं है ये तौ मैया जैसें गऊरहें तैसेंही ग्वारनकों रहनौं चहियें, तबही धर्म बनें है, नहीं मेरी भोरी मैया धर्म विगड़ैहै सो मैया तू जो ये चाहैं कि लाला मेरौ पनहीं पैरकें, छत्रीलगायकें जाय, तौ मैया गैयन के लिए हू जूती, छत्री मगवायदै, जो गैया जूती पैरकें छत्रीलगायकें चलेंगी तो मैंहू जूती पैरकें छत्रीलगायकें चलोंगो, ये सुनकें यशोदाजी बोलीं—बेटा ! ऐसे धर्म सों कहा मिलै है । आप बोले—मैया सुनः—

धर्मादायुर्यशोवृद्धिर्धर्मो रक्षति रक्षितः ।

मैया ! तू मेरी काहू बातकी चिन्तामत करियो, अब तू घरकों देख और देखमैया ! तू मोकों गिल्ली डंडा बनवाय राखियो, और दोगेंद पचरंगी सिमाय

राखियो, और जो कोऊ मथुरातें विसायतो आयजाय तो ४-६ खिलौना लै लोजो, इतनी कहिकें आपनें आज्ञा मांगी है ।

आज्ञामातः पितरिति सुतं, संपतन्तं पदान्ते ।
दोर्भ्यां धृत्वा हृदिनिदधतस्तन्यवाष्पाम्बुपूरन् ।।
चुम्बंन्तं तद्वदनकमलं मार्जयंतो कराभ्याम ।
जिघ्रन्तौ तं शिरसि पितरावूहतुर्बाष्पपूरम् ।।

मैयाजी, वाबाजी मोकों आज्ञा देउ, यह कहिकें प्रभू नन्द-यशोदाके पांयनमें गिरन लगे, सोही कृष्ण कों नन्द-यशोदा नें दोनों हाथसों उठायकें छातीसों लगाय लीन्हों, और लालाके मुखकों चूमते, अलकन पैं, कपोलन पैं हाथ फेरते, माथे कों सूघते, नन्द-यशोदा अंसुअन कों बहावते, ऐसें जब माता-पिता कों प्रणाम करिकें पधारे । तब यशोदाजी हाथ जोड़कें खड़ी है गई और दई-देवतान कों मनावन लगी ।

"भूर्द्योर्भव्या भवतु भवतो रक्षिता श्री नृसिंहः ।
शस्तः पन्था वनमपि शुभं भावुका दिग् विदिग्च ।।
स्वागच्छस्त्वं पुनरथ गृहं मंगलालिंगतस्त्वं ।
दत्तानुज्ञ इति च मुमुदे वत्सलाभ्यां पितृभ्याम् ।।

अहो मेरे लाल ! धरती और आकाश तुम्हारे लियें मंगलकारी होंय । श्रीनरसिंह तुम्हारी रक्षा करें। मार्ग तुम्हारे लियें आनन्द दैवेवारौ होय । दिशा-विदिशा तुमकों आनन्दकारी होंय । और आनन्द सौं तुम गैया-चराय कें घर आऔ । या प्रकार सों दोनों माता-पितानें, आशीर्वाद दीन्हें । और नन्द-यशोदा व्रजकों पधारे । कृष्ण-बलराम दोनों भैया बनमें पधारे गैया चरायवे कों ।

बंशी विषाण हल–यष्टिधरैर्वयस्यैः ।
संवेष्टितः सदृश हास–विलासवेषैः ।।
गच्छन् वनाय भवनाद् वन प्रेक्षणीयं ।
मुष्णन् मनो मृग दृशामथ निर्जगाम ।।

बंशी, भैंसकौ सींग, हल छड़ी कों हाथमें लीयें गोपनके बीचमें जाते भये श्रीभगवान् अपनौं कमलदल समान शीतल दृष्टिसों व्रज स्त्रीन कौ मन चुरावते बनकौं पधारे। सो हे राजन्! वा समय अपनी चित्रसारी की खिड़कीमें विराजमान जो बृषभानु, नन्दिनी ही, विननेऊंवा वांकी अदाकी झाँकी कौ भीतर से जो एक झोका कियौ सोई श्रीलाड़िलीजी नेत्ररूप चकोरी ने जब प्रभूके मुखचन्द्र के सौन्दर्यामृतकौ पान कियौ तबः—

अन्योन्यासंग संध्वस्त दृष्टि कल्लोलमुज्ज्वलम्।
कृष्णं रसार्णवं भेजे राधा सुरतरंगिणी॥

श्रीप्रियाजी की दृष्टि चितवन रूप गंगाकी धार उज्जवल रस समुद्रमें मिल गई। अर्थात् समुद्रमें मिली भई की सी नाईं एक्यताकों प्राप्त भई। समुद्रमें तौ लहर उठौ करै हैं यहाँ श्रीकृष्ण रूपी समुद्रमें जे दृष्टि रूपक हिलोर हीवे अन्योन्य मिलन सों स्थिर है गई, अर्थात् प्रिया प्रीतम को परस्पर दृष्टि मिलवे सों जहाँ की तहाँ ठहर गई हैं। अहो राजन्! वा समय नन्द-नन्दन सौन्दर्यानुभव के करते ही श्रीलाड़िलीजीके हूँ मनमें कोई एक हृद्-विकार (भाव) अरसंभावित रसज्ञान् रहित अन्तःकरण बांस कौ घुन कतरौ करै है। निरन्तर याही तरह कतरतौ भयौ और रत्नवलीके कल समान कपोल हैगये, घामके सूखे आमके कोपल की तरह ओष्ठ हैगये, बर्फ से आच्छादित नीलकमलदलके समान नेत्र युगल हैगये, ग्रीष्मके दिनकी तरह दीर्घ गर्म श्वासागम निर्गम हैगये, अज्ञपुरुष के समान भीतर सों अवलोकन है गयौ। आतमाराम मनुष्यके प्रस्थानके समान उद्येश्य रहित यह विहरण है गयौ, ग्रहमें ग्रस्त दयायुक्त पुरुषनके चरित्रके समान अनवस्थित वचन हैगयौहै, निर्वेदयुक्त पुरुषके स्वभावकी तरह ग्रहादिककार्य सों पराङ्मुखी भावहैगयौ, वो भाव भीतर विबर्णमान हि तो भी सुस्थ है। उद्वेग उत्पन्न करनवारौ भी उद्वेग रहित है। सन्निपात ज्वरकी तरह, अस्थि (हाड़) के जोड़न कों निरन्तर मरोरनवारौ और अत्यन्त तृष्णाको करनवारौ होतोभयौ। तब श्रीशुकदेवजी कहें— कि हे राजन्! श्रीबृषभान नन्दिनी की यह दशा देखकें कोई एक प्रियसखी, विसाखा सखी, एकान्त में यह कहत भईः—

सुमुखि कथमकस्मादेष ते हृद्विकारः।
प्रणयि पर जनानां प्राण संवाधकारी॥

समजनि जनि मात्रेणैव यातश्च पाकं ।

तदपि न चतुराणामप्ययं तर्क गम्यः ।।

कि अरी लाड़िली ! हे चन्द्रमुखी ! तेरी प्राणप्रिय सखी जननके प्राणन कों सम्यक् वाध करनवारों ये तेरे हृदयमें अपूर्व विकार अकस्मात् कैसें उत्पन्न भयौ है ? जो ये विकार उत्पन्न होते ही परिपाक अवस्थाकों प्राप्त हैगयौ, परन्तु चतुर मनुष्यन के पहचान में नहीं आवे, देख सखी !—

क्वतेऽध्ययन कौतुकं क्व शुकशारिकाध्यापना ।

क्व बर्हि नटनेक्षणं क्वपरवादिनो वादनम् ।।

क्वहास परिहासिनी प्रिय सखीजनैः सं कथा ।

किमालिवनमालिना तव मनोमणिश्चोरितः ।।

न जाने वो पढ़बे में तेरौ कौतुक कहाँ गयौ ? नजाने वो वीणा कौ बजानों कहाँ गयौ, और न जानें वौ प्रिय सखीन सों हास्यास्पदकी भरी बतरामन तेरी कहाँ गई ? आलि ! वाही बनमालिने तेरौ मनोमणि तो नहीं चुराय लियो ? सो सखी तू मोकों सत्य बतायदै—हे सखी ! यह बात अत्यन्त असंभावनीयहै, झूंठी मानवे लायक नहींहै, और मेघकी गोदके बिना बिजली शोभावती नहीं हैसके । और सूर्यमण्डल के बिना कमलनी भावकों प्राप्त है । और देख लाड़िली ! चन्द्रमाके बिना कमलनी आनन्दयुक्त नहींहै सकैहै, स्वातीनक्षत्र के मेघ के बिना चातक की दूसरे के शब्द कौ अच्छौ नहीं माने, और कामदेव के बिना रति अतिरति मती ह्वैवेके याग्य कभी नहीं है सके । मानसके मकरंदके बिना हंसनी उत्कंठायुक्त नहीं हैसकै है । शुक्ल-पक्षके बिना चन्द्रकला कभी दृष्ट नहीं है सकै । कसौटी के बिना सुवर्णरेखा अपने गुणको प्रकाश नहीं कर सके । बसन्त के बिना वासन्तीलता सुगन्धित-युक्त खिलवे कों अंगीकार नहींकरै । बहुत कहिवे सों सखीकहाहै, चांदनी चन्द्रमा में ही होयगी, रत्नप्रभा रत्नमें ही होयगी । शहद की धार पुष्पमें ही होयगी । यासों सखी मोसों क्यों छिपावै है । भलौ सखी मणिन की कीमत जोहरीनते छिप सकै । ऐसे विशाखा सखी के कहेकों सुनकें लालजी ने कही—सुन लाड़िली विशाखा नें सब ठीक कहीहै, याके कहिवे में नेकहूँ झूठ नहीं है । देख भैंन विशाखे ! यह बात विचित्र नहीं है । चन्द्रमा के उदय के बिना

रात्रिकी शोभा नहींहै। और चकोरीभी चन्द्रमाके बिना कभी काहू दूसरे सों श्रेष्ठ नहीं कर सकै, और न कभी दूसरेकों देखसकैहै । सो हे वृषभाननन्दिनी ! ये तेरौ हाल बिना नन्दनन्दन के दर्शनके भये कभीनहीं हैसकै है, प्यारी जरूर ब्रजराजकुंमरकौ समागम या दर्शन भयौ है। या ही सों तेरौ यहहाल है, ये सुनकें श्रीप्रियाजी वृषभानदुलारीने कही—कि सखीऔ ! ये तुम्हारौ बड़ौ साहस है कि अनहौनी बात कौं सिद्ध करौहौ, भलौ विशाखा अपने विशाखापनेकौं कैसें छोड़ैगी ? अर्थात् माधवमास की पूर्णमासी के सम्वन्ध कों नहीं छोड़ सकैहै। इतनी बात कहे पीछे ललिताजी कहन लगी हैं—“भावनी भविष्य अवश्य होयहै। हे राधे ! हे विशाखे ! तेरे सहाय्यकों राधा अवलंब करैहै , क्योकि विशाखा राधाकौ एकाहै, ये सुनकें प्रियाजी बोली—कि ललिते ! देख भैना ! आकाशलता जो है वो काशकी लताके समान फल पुष्पयुक्त है, ऐसो कहनौ कभी बनसकैहै, झूठा बात कौ आग्रह कभी नहींकरनौचहियें, यह सुन हंसती-२ श्यामासखी बोली—भैना ! जानदेउ या बातकी चर्चाकों, भलौ भैना ! चन्द्रमा सूर्यकों हाथनसों कौन पकर सकैहै ? और भैना ! ऐसी कौनहै जौ काँच मणिसों महामणिकों बदलौ करैहै ? ऐसौ कौन है जो समुद्रक मत्स्यनकौं हाथमें लै सकै है। ऐसौ कौनहै जो मणिके लोभसों सर्पके माथेकी मणि लैवेकी इच्छाकरै ? ऐसो कौनहै जो सिंहके बच्चाके वारनसों गुहवौ विचारै । यासों याए हंसी समझ करौ तब विशाखाजीने कही, भैना ! सुनः—

“माधवो यदि निहन्ति हन्यताम्, वान्धवो यदि जहाति हीयताम् ।

साधवो यदि हसन्ति हास्यतां, माधवः स्वयमुरीकृतोमया ।।

मेरे पति मोय मारो तौ भले ही मारौ, बांधव मोय त्यागौ तौ भलेंइ त्याग दैउ। साधु हंसों तो हंसौ, मैंने तो भैनाओ अपने ही आप माधवकों पति मानलियौ, जे छिपात्रे सों भलेही छिपाऔ भैनाऔ ! हम पै तो छिपाइवौ आवै नहीं हैं। ये सुनकें सखी हंसी । इतनेमें भगवान् नन्दग्राम के बाहर पधारे और जो स्वतः पूर्ण पवित्र वृन्दावन हो, ताकों अति पवित्र करते भये भगवान जा वृन्दावन में पधारे वो वृन्दावन कैसो हैः—

क्वचिन्मरकतस्थली कनक गुल्म वीरुध द्रुमाः ।

क्वचित्कनकवोथिका मरकतस्य वल्यादयः ।।

क्वचित् मरकतद्रुमाः कनक वल्लिभिर्वेलिताः ।
क्वचित्कनक पादपा मरकतस्य वल्लो जुषः ।।
क्वचित्स्फटिक भूरुहाः कमलराग वल्लीभृतः ।
क्वचित्स्फटिक वाटिका कमलरागवल्यादयः ।।
नसोऽस्ति मणि भूरूहो विविध रत्न शाखो नयः ।
सुचित्र मणि पल्लवा न खलुयान शाखाश्चताः ।।
नतेऽपि मणि पल्लवा विविध रत्न पुष्पानये ।
न पुष्पनिकरोप्यसौ विचित्रगंधबंधुर्नयः ।।
विहारि मणि पर्वतः प्रकरतः पताद्भि र्मणि ।
द्रवैरिव सुनिर्झरैः स्वयमितस्ततः पूरिताः ।।

जा वृन्दावन में कहींतो मरकतभूमिमें सुवर्णके वीरूध और वृक्षहैं, कहीं सोने की क्यारी में मरकत की बेलहै, कहीं पुखराजकी भूमिमें स्फटिक के झाड़-झकाड़ और वृक्षहै, कहीं स्फटिक की क्यारीमें पुखराजके बेल वृक्ष हैं और मरकतमणिके वृक्ष सोनेकी वेलानसों लिपट रहेहैं कहीं पुखराज के वृक्षमें स्फटिकमणिकी बेल लिपट रहींहैं। और या वृन्दावनमे ऐसौ मणि-मय पल्लव कोईनहींहै, जिनमें रत्नके पुष्प न होंय। और पुष्प समुदाय भी ऐसे नहींहैं कि जिनमें मनोहर गन्ध न होय । बिहार के मणि पर्वतनके समुदाय सों जो झरना बहेंहैं वे ऐसे मालुमपरैहैं मानों वे झरनानहीं मणिन के हो जल बहि रहे हैं। तिनसों आपही चारों बगल पूरित भई, स्थल-२ में उत्पन्न भई मणीन सों अन्य मणीन सों इन वृक्षन के थामरे बन रहे हैं। फिर जा वृन्दावनमें विलासनीन, वैश्यान की सी नांइ ललित पत्रां-कुरवारी। वैश्या पक्षमें—पत्रांकुर, पत्रलेखा तथा वनस्पति पक्षमें—ललित, प्यारे पत्र, अंकुर। पत्रा और कोमल। अर्थात् जैसें पत्रलेखा सों वैश्या सुशो-भित रहेहै ऐसे वृन्दावनके वृक्ष ललित पत्ता और कोपलनसों सुशोभित हैं। स्वाधीन भर्तृकासी नांई तरुण प्रिय तरुनसों लिपटरहीहैं अर्थात् प्यारे तरुण पतिके साथ स्वाधीन भर्तृका नायिका सदा आलिंगन कीनों होय है, ऐसेवृन्दावनमें वनस्पति प्रिय बृक्षनसों लिपटरहीहै । अनुरागिणी नायिका की तरह उत्कलिकायुक्तहै, जैसे अनुरागिणी नायिका उत्कण्ठायुक्त है, वनस्पति

पक्षमें कलीयुक्त वनस्पति है। स्वर्ग संपत की नांई सुशोभित सुवर्णवारी स्वर्ग में जैसें देवता ऐसेही यहां वनस्पति कैसेहैं, सुशोभित हैं पत्र जिनमें, पुष्पवती है। तौहू स्त्रीकी तरह रजस्वला नहींहैं, वक्र है तो भी (वक्र) नहीं है। पुष्प-फलन कों सबकों आनन्द दैवे वारीहै यासों वक्रनहींहैं। चंचलाहैं तो हू सब समय प्रकाश करिवे वारीहैं, निरन्तर बिजली कौ प्रकाश स्थिर नहीं होयहै। ऐसे वनस्पति में चंचलताहै, तबभी सर्वदा प्रकाश करिवेवारीहैं निरन्तर भ्रमरसहितहैं, तब भी भ्रमर रहितहैं, अर्थात् भ्रमर देने वाली नहीं हैं। पवननें झुलाईहै तो भी पवन स्पर्श रहित बोरूधवनस्पतिहैं, फिर वृन्दावनमें अनेक बनहैं, कैसेहैं ? किसकामजनन के मनकी नाईं सफलकर्म रंगहैं, जैसे सकाम मनुष्यनके मन कर्मन के फल के सहित होंयहैं, ऐसेही वृन्दावन के कामरंग नामके वृक्षनके सहित हैं। वेवांगना की सी नांई नांई प्रिय रम्भा हैं अर्थात् केलाके वृक्ष हैं। संगीतन की नाँई विविध रमणीय ताल हैं अर्थात् गाममें ताल तथा वनहै ताल वृक्ष हैं। और कर्मकाण्ड के कर्म की नांई असंख्य पके कंटकयुक्त फलवारे हैं। कर्मकाण्ड पक्षमें—कण्टक दुःखयुक्त फल, बन पक्षमें काटेन करके युक्त फल-वारे वन हैं। मेरू मंदार श्रंग विशेषके तेजकी नांई जम्बूकी स्यामतायुक्त है। वहां हू जामुनके वृक्ष हैं और हूँ जामुनके वड़े-२ वृक्ष हैं और नारायणके तप की नांई बदरीबेरके बनकी आधिक्ययुक्त है। बदरिका आश्रममें हूँ बेरके वृक्षहैं और यहां हूँ सर्वत्व बेरके बृक्षहैं। सर्वत्र बिरोधाभास अलंकारहै। फिर जा वृन्दावनमें छः निकुंज है—१. वर्षा हर्ष २. शरद मोह ३. हेमन्त सन्तोष ४. शिशिर-सुखाकर ५. वसन्त कान्त ६. निदाध सुखदई। वर्षा हर्ष नामकौ निकुंज कैसौ है ? कि भगवद्भक्ति योगकी नांई निरन्तर घनरसको दैवे वारौ है, कृष्णपक्षमें अत्यन्त रसप्रद, निकुंज पक्षमें धनरस सर्वत्र जलयुक्त हैं (मेघ पुष्प घनरस इत्यमरः) जलकौ नाम है। ब्रह्मानन्दके साक्षात्कार की नांई सदा आनन्द देनवारी चिररोचि है, निकुंज पक्षमें (अचिर रोची) वीजुरी जाननों। और जे पार्वतोके शरीरकीसी नांई सदा समुत्कंठयुक्त नीलकण्ठयुक्त है। एक पक्षमें नीलकण्ठ-महादेव देसरे पक्षमें भोर। बरुणकी नांई सदा सारंग सतशब्दकों धारण करैहैं। गरुण पक्षमें सामवेदका शब्दयुक्त गरूत्यंरव, निकुंज पक्षमें सारंगनाम मोरनको शब्द जाननों। और सूर्यकी नांई विकास तक कुभावातो दिग्मंडल है, सूर्य पक्षमें ककुमा दिशा मंडल तथा निकुंज पक्ष में अर्जुनकौ वृक्ष।

दात्यूहाः परतो रुवन्ति गणशः कोयष्टिकाः सर्वतो ।
मण्डूकाः प्रचलाकिनस्तत इतो धाराधरो व्योमनि ।।
आसाराः पयसां झपमझपदिति स्निग्धानि मंदस्वरा ।
सर्वे मुग्धदृशाँ रतान्त समये स्वापोत्सवं कुर्वते ।।

जाये जितमेंदेखें तामे तितमें अनेक पपीहानके शब्दपीहू-२ आय रहे हैं। सब ओर कोकिलानकी किलकार छाय रही है। जहाँ देखौ तहाँ मेंढ़कान की झनकार आय रहीहै। जहाँ देखौ वहाँ मोरन के कुहू-२ शब्द छाय रहे हैं जहां देखौ तहां मेघगण निरन्तर मेघकी धारान सों झपत-२ वर्षानु-करण शब्द, वर्षते दिखाई पड़ रहेहैं। ये सब व्रज सुन्दरीनके रतान्त समयमें स्वायोत्सव कहैहै। दूसरौ शरदामोह नामक निकुंज है। वो निकुंज भगवत चरणकी नांई कमलाकर ललित है। और हरिभक्तन की नांई निर्दोष जीवन और निर्मलाशयहै। बैकुण्ठनाथकी नांई शोभितचक्र और प्रफुल्लपन है, और भगवानके हृत्यकी नांई समय धार्तराष्ट्र हेलित है। और अध्यातमकयोग की नांई संचरप्तरमहंस है। ओर रामायण की नांई अभिराम लक्ष्मणालय है। और भगवत यशकी नाँई कुबलयामोद है। अर्थात् जहाँ कमलनके वन खिल रहे हैं। निर्मल जलयुक्त सरोबरहैं जिनमें चकवा–चकवी डोल रहेहैं, जामें हंस सर्वत्र क्रीड़ा कररहे हैं, और हंसनके बच्चा बोल रहे हैं।

कूजत्सारसकाञ्चिका मृदुनदत्कादंब पादांगदा ।
चक्राह्वस्तनमण्डलादरदलद्राजीव कोषानना ।।

नीलाम्भोरुह लोचना मधुकर श्रेणी भ्रमत्भूतला ।
यत्रा भाति पराग रञ्जिवसना मूर्तेव देवी शरद् ।।

जो सारस हैं बेई कोंधनी हैं। कामदेव पक्षी जाके बाजूबन्द है, चकवा-चकवीजाके स्तन, खिले कमल रूप जाको मुख, खिले नीलकमलजाके नेत्र भौरान की पंक्ति जाकी भौंह, ओर कमल परागरूपी जाके पीरे बसन ऐसी शरदऋतु मानों प्रत्यक्ष नायिका विहार कररही है। फिर तीसरी हेमन्त संतोष नामकी निकुंजहै। जामें भीमसेनकी नांई पुष्पमोहसों मेदुर व्याप्त है, अर्जुन की नांई मधुसूदन कौ प्रिय सहचर है, महादेव की नांई अनुगत बाण है। और

श्रीभागवतकी नांई मधुर शुकोदितहै। आयुर्वेदकी तरह प्रवीण हारीतहै, साधु संग की तरह मदको भेदन करनवारौ है। अर्थात् जो महासदा पुष्पनसों सदा व्याप्त है। और जामें पीतझिडी सर्वत्र खिल रहीहैं, नीलझिटीकी जहाँ सुगन्ध छायरही है। और तोतान के मनोहर शब्द है रहे हैं। हरताल नामके वृक्षन सों सघन हैं। और जहाँ निरंतर मदमत्तलाव नामके पक्षोनकौ कोलाहल है रह्यौ है। और फिर उपचीय वटते दोषयुक्त है तो भी दोष रहित है। पद्मनीनकी हानि करनबारौहै तब भी रात्रि सों पद्मिनी नाम की नायकान कौ महोत्सव करनवारौ है।

कुरबक कुसुमानि केशपाशेष्वलक कुलेषु वहन्ति लोध्रधूलिः।

स्रजमुरसि महासहा प्रसूनैः व्रज सुहसोन मणीन्द्र भूषणानि ॥

जा निकुंजमें व्रज सुन्दरी अपने केशनमें कुरूवकके पुष्पनकों, अलकावली में लोध्रकी धूलिकों तथा कंठमें महासदाके पुष्पनकी मालाकों धारण करैं हैं। फिर उत्तमोत्तम मणीनके आभूषणनकोंनहीं धारण करैहैं। ऐसे ही वृन्दावनमें शिशिर सुखाकर नामकौ चौथौ निकुंज है।

गाढालिंगन रंगमेवशयनं मानोपमानं गतौ।
दीर्घेव प्रिय संकथा न रजनी क्षीणोति निन्द्राग्रहः ॥
प्रालेयः परिरंभण व्यवहितं कर्तेति दूरे प्रियः।
स्पर्शोऽस्याः प्रिययोः सपत्र शिशिरः कालोऽव्यति प्रेमदः ॥

जा कुंजमें गाढ़ अति आलिंगन रंग है सोई शयनहै, मान जोहै सो यहां अपमान की कोटिमें प्राप्त भयौ है। अपने प्रियके संग जो बतरामन है सोई दीर्घ है। फिर रात्रिदीर्घ नहींहै। रात्रि बीतगई या हेतु सों निद्रामें आग्रह नहींहै, भले ही शिशिरकाल है, फिर नायक-नायिकानकों स्पर्श की ही गरमाई प्यारी लगै है, फिर बसन्तकान्त नामकौ पांचवौ निकुंज है, जामें:—

पुन्नागैरवतंसनं विदधती वासंतिकाभिः स्रजं।
गुच्छार्धं वकुलैर्ललाट पटले सिन्दूरकं किंसुकैः ॥
चाम्पेयैः कुच कंचुके कटितटे शोणाम्बरं बंजुलैः।
नित्यं मूर्तिमती सती विजयते श्रीपत्र पौष्पाकरी ॥

पुन्नागकेसरके तो कर्णफूल, वासन्तिकी माला, ललाटमें मोरसलीके चन्द्रार्ध, केसुके रूप सिंदुरुपकी बेंदी, चम्पाके पुष्पनकी कंचुकी, कमरमें वंजुल (अशोक) के फूलनको पीतवस्त्र धारण कर रही बसन्त ऋतुनायिका जहाँ नित्यमूर्तिमती निवास करै है। ऐसौ बसन्त नामकौ निकुंज है। फिर छटौ निदाध-सुखद नामको निकुंज है। तामें कश्मीर देश की नांई सततोपद्यमान है वैसो और सुगन्धि सों सुशोभित कभी तन है, और कासार की नांई प्रफुल्ल मल्लिका सों सालित ढकौ है। और शरत्काल की तरह सम्पन्न पाटल है। और स्वर्ग की नांई सदा उत्फुल्ल शक्र है। अर्थात् जामें चारों तरफ केशर की क्यारिनकों, या शिरीषके वनकी सुगन्धि छाय रही है। और मल्लिका खिल रही है, और खिले भये पाटलके वनकी शोभा सों शोभित हैं, और गुड़हर वन जहाँ न्यारे खिल रहे हैं।

कर्पूर त्रसरेणु बन्धुमिरयानिः स्पन्दर्मिबिन्दुमि ।
श्चंचच्चामर चारुमारुत धुतैर्मुक्ता वितानैरपि ।।
आकीर्णे जलयन्त्र वेश्मनि सरो वाप्यादिमध्यस्थिते ।
कृष्णो यत्र मुदा निदाध दिवसे शेते समं कान्तया ।।
करणालंकरणं शिरीषकुसुभैरुत्तंसनं पाटलैः ।
माला मल्लिभिरंगदादि कुटजैः सम्पादयत्यात्मनः ।।
आली भिर्वन सजभिः सहसदृक् भूषाभिरीशांघ्रयः ।
सेव्यन्ते दिवसावसान समये यस्मिन्निदाघः श्रियः ।।

जोनिकुंज बावड़ीन के मध्यमें स्थित है, जामें चारों तरफ कपूर कण सहित जल विन्दुन सों, और चल रहे शीतल पवन सों युक्त जलभवनमें प्रिया सहित नन्दनन्दन आनन्द सों नित्यप्रति आनन्दपूर्वक शयन कररहे हैं। शिरीष के फूलनसों कर्णाभरण, पाकर के फूलसों शिरोभूषण, मल्लीके फूलनसों माला, गुड़हर के फूलन के बाजूबंद धारण करकें मूर्तिमती निदाघ लक्ष्मी, ग्रीष्म ऋतु समान श्रृंगार वारी वनालि पंक्तिरूप आलीन को संग लेकें सायंकाल के समय श्रीलाडिलीजी की चरण सेवा में प्रतिदिन हाजिर रहे हैं। फिर जा श्री वृन्दावन में:—

यस्मिन् मंजुल कुंजमण्डपकुलं नाना मणीन्द्रालयः ।
स्पर्धावर्धित सौभगं पिककुलैः भृङ्गैश्च निष्कूजितम् ।।

यस्मिन्भौषधयोजलन्ति रजनौ दीपायताः सौरभं ।
कस्तूरी हरिणांगना विदधते भूयश्चमर्योमृजाम् ।।

अनेक प्रकारकी मणीनसों निर्मित मन्दिरन की स्पर्धा सों बढ़ेभये सौभाग्यसों युक्त पपीहा, और भ्रमरनके समूहनके कुंजितन सों कूजित अति मनोहर कुंज मंदिरनसों युक्त और जा श्रीवृन्दावनमें रात्रिके समय मशालकीसी नांई औषधि प्रकाश करें हैं । और कस्तूरी हरिणकी स्त्री हरिणी स्वनाभिगत कस्तूरिका भावसों सर्वत्र सुगन्धित करें हैं । सुरभी गौं अपने पुच्छागुच्छानसों बुहारी करती बिचरैंहै । जा श्रीवृन्दावनमें यमुनाजी नामकी नदी बहै सो मानों वृन्दादेवी की नील मणिमय हार की लड़ीहैः अथवा नीलकमलकी माला है, अथवा कज्जल की खाईहै । अथवा कारी साड़ी पहर राखीहै जो यमुना सतरंगा है, तरंगसहितहै, तो भी नतरंगा-धायिका हैं । नम्रमनुष्यन कों रंग स्थापन करनवारी है, और कमल सहित है तो भी नश्यत्कमला है । नहीं नष्ट भयेहैं मंजुल जामें अर्थात् अगाध जलयुक्त है और सारसनके सहितहै । तो भी विसार सारस्या प्रबल मत्स्यनके चलन सों युक्त है । मज्जस्नानसों ही सुख देवेवारीहै, तो भी न मज्जन सुखदा, प्रणाम करन वारे पुष्पनकों सुखदेनवारी है, श्रीयमुना नामकी अति मनोहरा साक्षात् वस्यद्रव रूपी नदी अपनी हिलोरन सों सुशोभितकर रही हैं ।

तमाल नव मालिका कनक यूथिका यूथिका ।
कुरंट कलनम्बिका दमनकान्ति मुक्तादिभिः ।।
अपिस्थल सरोजिनी विचिकिलादिभिः कंदली ।
प्रियंगुतुलसी मुखैरपि विचित्र वीरुद्गणैः ।
सितासित विलोहितोत्पल सरोज कल्हारकैः ।
रथांगबक सारसैः कुरर हंस कारण्डवैः ।।
विराजित तरंगकै विमल वारिभिर्वापिका ।
तडाग सरसी मुखैः परिवृतानि तोयाशयैः ।।

जा वनमें शिरसधव शिंशिपाल कुचलोधको शाल की प्रियाल सरल सालपील कैथ, करमर्द, कटीर, करकीट और कदली आदि वृक्ष व्याप्त हैं, और कनकवेल आदि लता और रथांगवक सारसादि पक्षी जामें किलोल कर

रहेहैं, तावृन्दावनकों देखकें भगवान रमण करिवेकौ मन करतेभये अपने निर्मल यशकौ गान करन वारे गोपनके बीचमें वेणु बजावते, बलदाऊ भैयाके हाथकौ पकरें, गैयानकौं अगारी करकें विहार करौ चाहैं। ऐसे भगवान पशुनके हित वसंतऋतुको निवास, जहाँ चार महीना, श्रीवृन्दावनमें प्रवेश करते भये। जहाँ कमल कल्हार सौगंधादिक अनेक प्रकार के कमल वनमें भौरा गुंजार कर रहेहैं। आम्र, कदम्ब, शाल, तमाल तथा कंस्ननके वनमें तोता, मैना, चकोर आदि पक्षिनके शब्द है रहे हैं, महात्यानके मनके समान स्वच्छ जिनमें जल ऐसे सरोवरके शीतल धर्मपुत्र कमलाकर संबन्धी गंधयुक्त पवनशीतल मंदसुगंध जहाँ चल रह्यौ है, ऐसे श्रीवृन्दावनकौ देखकें श्रीनन्दनन्दन रमण करिवेकौ मन करते भये। लाल-लाल नवीन कोंपलकी शोभा जिनमें फल-पुष्पनके भार सों लूम-२ घूम-२ भूमि चूम रहे वृक्षनकों देखकें मन्द-मुस्कान करकें श्री नन्दनन्दन श्रीदाऊभैया सों बोले—भैया बलदेव! देखौ ये वृन्दावनके वृक्ष आपके देवपूज्य पुष्पफलके पूजन योग्य चरणनकों अपने वृक्षपन दूर करिवे कों नीचेभये अपनी डारीगुद्दनके बहाने सों मानौं पूजन कर रहे हैं। कि तमोगुण जन्य हमारौ वृक्षपन दूरकरौ, और जो पै मोरहैं वे आनन्दसों नाचैं हैं और हरिणी आपकों स्नेह दृष्टिसों देखैं हैं, और कोकिलगण बोलैं हैं सो मानों अपने घर वृन्दावन में आये आपकौ सत्कार कर रहेहैं। या सों भैय्या ये सब बड़भागीहैं क्योंकि सज्जन मनुष्यन के ये ही स्वभावहैं, और भैयाजी ये भौरा अखिल लोककौं पवित्रकरन वारौ आपकौ यश गायेहै, ये आपके भक्तन में मुख्य ऋषि है, देखौ आप बन में भी आयके छिपे हौ तौ भी ये आपकौ अपनौ आसदेव जानकें पीछौ छोड़ो नहीं है, और भैया! ये धरणी धन्य है, तथा पर्वत, तृण, लता, वनस्पति, वृक्षलता जिनकौं आपकी अंगुली सों स्पर्श भयौ है सब धन्य है, और लक्ष्मी हूं की जामें बांदावा आ-लिंगन कौ करनवारी गोपी हू धन्य है। श्रीनंदनंदनकृष्ण अति सुशोभित श्री वृन्दावन कों देखकें अति प्रसन्न हैकें श्रीयमुनाजीके पुलिनमें श्रीगिर्राजकी तरहटीन में गौअनकौं चरावते दाऊभैयाकों संग लैकें और सब मित्र ग्वाल-बालनकों संगलैकें रमण करते भये कभी तौ आप मद में अंधे उन भ्रमरन कू भू भूं गान करते देखकें, आप हूँ आजानुलम्बिनी बनमाला, वैजयन्तीमाला कों पहिरें दाऊभैया कों संग लैकें उनभौरान की सीं नांई गान करैहैं। तब सब ग्वाल-बाल प्रभु के चरित्र कौ गान करैहै। कभी हंसके बच्चान के कूजन कू सुनकें दोनौं भैया उनकी सी नांई बोलैं हैं। कभी बन की लतान में

मोरनकौ नृत्य देखकें आपहू अपनेमित्र ग्वाल-बालनकूं हंसावते नृत्य करन लगे हैं। कभी मेघके समान गंभीर वाणी सों गौअन के नाम लै-लैकें हे गंगे ! हे यमुने ! हे कालिंदि ! हे श्यामे ! हे धूमले ! हे धवलिके ! हे कुरंगे ! इत्यादि नाम सों कारी कामर धौरी धूमर हियो-हियो या प्रकार सों ऊंची मेड़ पै चढ़ कें टेर मारैं हैं। चकवा-चकवी, भरद्वाज नामके पक्षी, और मोरन के मनोहर शब्द सुनिकें बाघ, सिंहसौं डरपैकीसी नांई, जैसें वे सब बोलें हैं वैसे आपहू बोलैं हैं। कबहू जब दाऊभैयाकों क्रीड़ा करते-२ श्रम होयहै सो जब भाँग को सन्नाटौ आवैहै, सोई भगवान् जानजांय कि दाऊदादाकों भांगकौ झौंका आयगयो। तब आप कोंपल पत्तीन कों लाय-२ के गुद गुदी रेती के ऊपर बिछाय देंय हैं ताके ऊपर पांच-सात छोरानके पिछोरानको गद्दासौ बनायकें काई छोरा की जांघकौ तकिया लगाय सोयजाय हैं, आप पांव दावौ करैं हैं। वा समै सारो सोरो हवालगो सोई दाऊजो गहरी नींद के लंबे-२ खर्राटे लेन लगे। तब भगवान नें बिचारी कि रे गजब भयौ, अब दाऊकी नींदकौ कहा ठिकानोहै ये ठैरे अमली ओर दिन रह्यौ है चारघड़ी और अवेरहैजायेगी तौ काल मैया गाय चराइवे कौ काहेकूं आमनदेगी। सोई जैसेंई कर्री मुठ्ठी लगाई सोई दाऊजी चौंक उठे, और कहन लगे भैया कनुआ ! कहा है ? दिन चार घड़ी है, अबेर हैजायगी, तौ काल मैया गऊ चरायवे नांय आमन देइगी सो भैयाजी अब या नींद कौं छोड़ौ और उठौ, गैयानकों घेरकें लाऔ और घर के चलिवेकी तैयारी करौ। तब बलदेवजी उठबैठे। ये जो आप पांव दावैं हैं सो रामावतारकौ लक्ष्मनकौ बदलौ चुकायेहैं। श्रीशुकदेवजी कहैं—हे राजन् ! दोनों भैया कभी नृत्य करैं, कभी परस्पर युद्धकरैं, कभी मंद मुस्कान करते सब ग्वाल-बालनकी प्रसंशा करते भये और आप श्रीकृष्ण जब कुश्ती लड़ते-२ थक जांय हैं तब वृक्ष के नीचे जाय हरितपत्र पुष्पदल कोंपल सों गुदगुदी गद्दी बिछायकें ताके ऊपर ग्वाल-बालन के पिछौड़ा बिछायकें एक काई अपने मित्र की जांघकौ तकिया लगायकें और शयनकरैंहैं। या सों यह जताये हैं कि भैयाऔ ! मोकों केवल भक्तन कौ ही सहारौ है। जैसें मेरे भक्तनकौ केवल मेरौ ही सहारौहै। तैसेंही मोकूं भी भक्तनकौ सहारौ है। ऐसें जब नंदनंदन शयन करैंहैं तब कितनेक बड़भागी गोप बालक नन्दलालके चरणनकों अपनी गोदमें धरिकें धीरे-२ दावें हैं, और जो बालकहैं वे ढाकके, महुआके, निसोहके पत्तानके पंखा बनायकें वे गोप बालक, नष्ट भये हैं पाप जिनके, वे पंखासों हवा हांकेंहैं। अन्य सखा मनके हरन बारे भगवच्चरित्रन् कौ गानकरैंहैं। स्नेह

समुद्र में डूबी है बुद्धि जिनकी ऐसे गोप बालक भगवद्यशकौ गान करेंहैं। श्री शुकदेवजी कहैं—हे राजन्! छिपाई है आत्मगति निजऐश्वर्य जानें ऐसे पूर्ण पुरुषोत्तम ब्रह्मरूप आप मैं गोपकौ पुत्र हौं ऐसें अपने आपकौं अपने चरित्र न सों दिखावते लक्ष्मी जाके चरणनकों रात-दिना दावै सो भगवान उन ग्राम्य गामनके वासी गोप बालकनकेसंग आपहू ग्रामीणनकीसीतरह रमण करें हैं।

धेनुकवध – श्रीकृष्ण बलराम वृन्दावन में बिहारकर रहेहैं, गौ सब चरत डोल रहीहैं, आपदोनों भैया विराज रहेहै, इतने हो में श्रीदामा नामकौ मित्र और सुबल, तोककृष्ण आदि सब बड़े-२ गोप कृष्ण-बल राम के पास आये, और बोले—क्योंजी और दूसरौ कृष्ण कौन है ? संदेह न करनौ, जा दिन नंदबाबाकें कृष्णजन्म भयौ, वाही दिन एक गोप नन्दबाबा के पास आयकें बोलौ—"भैया नन्द ! तेरें लालाभयौ सो बड़ों भाग्यवान भयौ है" नन्द ने कही—"भैया ! कैसें ?" तब गोप बोलौ—भैया ! तेरैं छोरा भयौ सो खेलन वारेकौऊ संगलेआयौ अर्थात् मेरें भी आज अभी लालाकौ जन्म भयौ है। नौवत खानौ धरायवेकौ कहा कामहै। हम और तू का दो थोरेही हैं, सब एक ही माया है, तेरे छोरा के नेगटेहलेनमें मेरे हू छोराके नेगटेह लेन है जांयगे। जो मोसौं कोऊ कछु आयकें कहैगौ तो कहि दऊंगो कि ये हू नंदबाबाकौ छोराहै। वा में मेरे कौऊ सब है गयौ। भैया ! यह तौ बताय तैनें अपने छोरा कौ कहा नाम धरौ है ? तब नन्दजी ने कही—भैया ! मैंने तो अपने लालाकौ नाम कृष्ण धरौहै। तब या गोपनें कही भैया ! मैं हूं अपने लालाकौ नाम कृष्ण धरूंगो। तब नन्दबाबा ने कही ना भैया या बातकौ असंगौ झूठौ,तब या गोपनें कही—अच्छी बात है तू बुरौ मानै तौ तेरे छोराकौ नाम कृष्ण और मैं अपने छोराकौ नाम तोक छोटौ कृष्ण धरूंगो। ऐसेंयाकौ नाम तोककृष्ण भयौ, संदेह न करनौ तब सखा भगवान्सों बोले—हेराम ! हे कृष्ण ! हे दुष्टनके मारनहारे अर्थात् भैया ! तुमने और तो बड़े-बड़े दुष्ट मारे फिर जब या दुष्टकों मारौगे तब हम साँचौ दुष्टनिकन्दन कहेंगे, तब भगवान् बोले— कहौ तो सही यार कौनसौ है ? तब सखा बोले—भैया ! कनुंआ ! यहां सों बहुत पास एक वन है, और बावनमें निरे तालके वृक्ष हैं, यासों भैया कनुंआ ! वा वनमें तालके फल बहुत टूटे पड़ेहैं, अर्थात् तोरवे की जरूरत नहींहै। हजारन फल निरन्तर टपकौकरैं हैं। तब भगवान् बोले—कहौ भैयाऔ ! फिरखाऔ क्यों न हौ ?

सखाननें कहीकि बाबा खांय कैसें भैया ! वहांतौ बड़ौ भारी पाप है, तबी तौ तोसों कही, तब आप बोले—"कहा पापहै ?" सखाननें कही–लाला ! वा वनमें धेनुकासुर नामकौ राक्षसहै, जो बड़ौ दुष्ट है काहूकूं एकभी फल नहीं खान देय है, नाकाऊकौं आमनदेयहै, लाला ! वोदुष्ट बड़ौ बलीहै, और गदहाकौ रूप धारण करकें रहैहै। हजारन वाकी जातवारेहैं। हम जानेंतैनें बड़े-२ दुष्ट मारेहैं, लाला ! तू वाकौं भी मारैंगो फिर लाला वो धेनुक मनुष्यनकौं खानवारौ है, बहुत से आदमी वानें मारडारे जोकोई वा वनमें जीव-जन्तु जायै है वो बाईकू खायजायेहै। या डरके मारैं वहाँ कोई नहीं जायहै। आदमीकी तौ बात कहाहै वहां तौ पशु-पक्षी हूँ नहीं जांयहै। और लाला वा वनमें फल जो ऐसे हैं वे फल काईनें आजतक नहीं खाये और प्यारे उन फलनकी कछु अपूर्व सुगन्धहै, देखौ ये कैसौ पवन आयौ हमारे मनकौं हरैहै, सो तूतौ राजाकौ बेटाहै। हम जानें तोकौं तौ कछु परवाह हैनहीं, फिर भैया हमतौ याकी सुगन्धि सूंघ-२ कें मस्तभये जांयहैं, और हमारौ मन समझाये पै नहीं समझैहै, तो सरीकौ सखा पायकें हूँ न खाये तौ कहाभई यार ! तू हमकों वहां चलकें तालके फल खवायदै। हे दाऊभैया ! इन फलनके खायवेकों हमारी बड़ी इच्छा है, जो तुम्हारी इच्छा होय तौ अपने मित्रन कों जरूर खवायदैउ ! हमें तौ बड़ी भूख लगी है, अव तौ एसे अपने मित्रनके कहेकौ सुनकें भगवान्‌नें दाऊजी सों कही--भैया ! जो नींद खुलगई होयतौ चलौ। भैया ! तेरी आज्ञा बिन कछुनहींहैसकैहै, और इन फलनकी अपूर्व सुगन्धिहै अपुननें भी कबहू खाये नहीं हैं, चलौ तो सही। दाऊजीनेंहू कही—जो तेरी इच्छा है तौ चल, और इन छोरानते कहदै थोरेसेके पीछैं क्यों अपनौ मन बिगारौहौ ? चलौ आज गधनकों मारेंगे, ऐसें आप हंसते-हंसावते तालवनकों पधारे, यामें यह अभिप्राय समझनौ कि भगवान् भक्तनके बसमें हैं, क्योंकि देखौ, दुनियांमें लोगवाग गधानकों छीवे तांईको परेज करैं हैं, सो आप गधाके मारवेकों ताल वनमें पधारे वहाँ जाते ही दाऊजीने कही लेउयारौ यही तालवनहै, लेउजाउ घुसजाऔ, और फलनकौं खूवखाऔ मैंठाड़ौहूँ जो आवैगौ ताय सबै देख लेऊंगो। तव सब सखाबोले—भैया ! हमतौ या वनमें पहलें कबहू पाँव नहीं धरेंगे। बलदेवजीने कही-'जाऔ' डरौ हौ तो लेउ पहिलै हौलें-२ मैं जाऊं।

श्रीशुकदेवजीकहैं—हे राजन् ! बलदेवजी यह कहिकें तालवनमें धंस गये, और धंसकरकें आपनें पेड़न कौं पकर–२ कें हिलाये, सोई फल टूट–२ कें पृथ्वी पै गिर पड़े, जैसें मतवारौ हाथी हलाय-२ कें फलनकौं गेरैहै ऐसैंही दाऊ

जीने पेड़न कौं हलाय-२ कैं फलगिराये । गधा रूप धेनुकासुर नें जो फलन के गिरवे कौ शब्द सुनौ सोई वृक्ष सहित भूमि कंपावतौ, रेंकतौ दौड़ौ आयौ, झट आयकें पिछारी के दोऊ पांवन की दुलत्ती दाऊजीकी छाती में मारी, फिर पिछारी कौं लौट गयौ, और फिर आयकें दुलत्ती मारी सोई दाऊजी नें दोऊ पांव पकरकें ताल के पेड़ पै मारौ है । वा घन्नाटें में ही वा दुष्ट के प्राण निकस गये । बलदेवजीनें जा पेड़ पर ये दुष्ट मारौ हो सो या दैत्य के लगिवे सों वो महाताल थर-२ कांपतौ बड़ौ भारी जाकौ सिर सौं अगल-बगल के पेड़न कों कंपावतौ टूट कैं गिर परौ । जा वृक्ष में धेनुकासुर मारौ हो वो वृक्ष और पास केनमें लगौ, वो और तीसरेनमें लगौ, ऐंसे ही वो वामें लगौ या प्रकार सब वृक्ष गिर परे, याही प्रकार राजन् ! दाऊजीने हूं एक लीला खेलकरकें फेंकौ जो धेनुकासुर ताके सरीर की जामें चपेट लगी और वामें लगी ऐसे एक की चपेट सों एक गिर परौ । राजा बोलौ—महाराज ! एक बड़ौ आश्चर्य भयौ कि एक वृक्ष की लपेट सों सब वृक्ष कांप उठे ।

शुकदेवजी कहैं—हैं राजन् ! अनंता साक्षात् शेषावतार हैं । जगत के ईश्वर दाऊजी में यह बात आश्चर्य नहीं हैं । क्योंकि जो शेषावतार में यह सब जगत ओत-प्रोत है, जैसें सूत में वस्त्र । ऐसें जब धेनुकासुर मारौ गयौ तब जितने धेनुककी जात के तालवन में रहन वारे गधा हे वे सब रेंकते-२ कृष्ण दाऊ कौं मारवे कों आयें, क्योंकि (हत बांधव) मालिक तिनकौ मर गयौ, बिनहजारन गधान कों रेंकते-२ दुलत्ती चलाते आवते देख कृष्ण बल-राम एक पैंतरा बढ़ायकें ठाड़े हैगये, जो गधा आवै ताके ही पांव पकर गन्न -२ फिराय ताल के वृक्ष पर पटक देंय । भगवान बोले-दाऊ दादा ! ये अच्छौ गधा मार दाव बतायौ, या प्रकार सब गधा मार डारे, वा समय फल के बिछौना जामें न्यारे बिछ गये, और गधान के शरीरन सों भूमि न्यारी पट गई । सो ऐसी शोभा कों प्राप्त भई जेसे बादल पटौ आकाश शोभा कों प्राप्त होय है । श्रीशुकदेवजी कहैं—हे राजन् ! कृष्ण-बलराम के या आश्चर्य कों देखकें देव, गन्धर्व, यक्ष, किन्नर, चारण, सिद्ध जय-जय ध्वनि करकैं नगाड़े-दुंदभी बजावन लगे हैं । पुष्पन की वर्षा वर्षावतें, जय धेनुकारी भगवान् की जय, ऐसें स्तुति करते भये । तब मधुमंगला बोलौ—सारे औ ! जे गधामार की जय कहते का शर्म आवै है । श्रीव्यास नन्दन कहैं--हे राजन् जा दिन भग-वाननें धेनुकासुर मारौ तादिन ते मनुष्य निर्भय हैकें ताल के फलन कों खान लगे । श्रीशुकदेवजी कहैं—हे राजन् ! धेनुकासुर कों मारकें, आपने ग्वाल-

बालन कों आज्ञा दीन्हीं, लेउ भैयाओ लेउ अब खूब फल खाऔ और अपनी-२ गैयान कों लै चलौ, तब सब छोरा बोले--बोल गधा के मारनवारे की जै। ऐसें कहिकें सब ताल वन में धंस गये और पके-२ मीठे-२ फल खाते जाय हैं, और "जय गधा मार की जै" कहते जायं हैं। तब मधुमंगला बोलौ, भाई कोऊ मनुष्य मरै ताके-१२-१३ दिन पीछैं भोजन मिलै है, और या गधा के मरे १ घंटा के पीछें खूब चकाचक भोजन मिले। तौ मैं तौ जानौं यह गधा सब मनुष्यन ते अच्छौ है। राम करै नित्त-२ ऐसे गधा मरैं और हमकों भोजन होत रहें। ऐसें जब थोरौ सौ दिन रह गयौ संजा है गई, छोरा बन में सों निकसे नहीं तब भगवान बोले--सारे सखाऔ ! आज यहाँ ही रहोगे, सन्ध्या है गई है कछु खबर है, कहा आज कौ ही दिन है, अब काल फिर यहाँ ही आवेंगे और गाय चरावेंगे, अब वन में सों जल्दी निकसौ, अबेर है जायगी तौ कलसों मैया आमन हू नांय देयगी, ऐसें कहिकें जैसें-तैसें सब ग्वाल-बाल बन में सों निकसे और निकरकें भगवान सों बोले—भैया ! तू तौ बड़ौ जल्दीबाज है, देखतौ सही अभी कितनौ दिन है, तू अपनी गैयानकों तौ घेरकें लाउ, तब भगवान बोले—देखौ ! यह उड़नी घाम है, तुमकों जादा दीखै है अब थोरी देरमें गई जानीयों, और मैं जानौं हों आज तुम्हें गैया नहीं घेरनी, तुमतौ आज गैयान कों यहींरखौगे, और तुम यहींरहौगे, यह सुनकें सखाबोले-अच्छौलाला ! पहलें तू तौ अपनी गैया घेरला, तब हमहूं घेर लामेंगे। तब भगवान बोले—सारे औ ! तुम मेरी कहा कहौ मैं तौ यहीं बैठौ-२ गैयान कों बुलाय लुगों। भैया ओ ! मोपै एक सिद्धाईकौ लटका आवै है, एक दिन बाबा कें कोऊ एक मंहत आये हे, सो मैंने उनकी बहुत चाकरी कीन्ही ही, तब मोको बिननें एक मन्त्र बतायौ हौ, और कही-सुन बेटा ! यह हमारौ एक सिद्धनकौ लटकाहै। याकौ नाम आकर्षण मन्त्र है, याकों हम तोकों बतावें हैं, यामें यह करामात है जो कछु बैठकें या ठाड़ौ हैकें जब या मन्त्र को १० बार मन में जपकें और जाकाहू कौ नाम लैकें, पुकारकें बुलावैगौ सो बाई समय वो जीव तेरे पास आय जाइगौ। यासौ भैयाऔ ! मैं तो गैयान कों यहीं बुलाय लेंऊ, तुम जाऔ और अपनी-२ गैयान कों घेर लाऔ। सोई छोरा बोले—हमहूं देखें तेरी सिद्धाई कौ कैसौ लटका है ? और गैया यहां कैसें चली आवे हैं ? तव तौ आप एक बड़ी लहरियादार बालू की ठेकरी ही ऊंची, बाके ऊपर जायकें खड़ेहैगये, पीतपट पहिरें नागर नट त्रिभंगी खड़े भये, और बंशी में गैयानकौ नाम लै लैकें, बुलामन लगे:—

पिशंगि मणिकस्तनि प्रणति शृंग पिंगेक्षणे ।
हियो-मृदंग मुख धूमले सबलि हंसि वंशि प्रिये ।।
हियो-स्व सुरभिः कुलं तरलमाह्वयन्तो मुदा ।
व्रजे विजयिनं भजे विपिन देशतः केशवम् ।।

अरी ओ श्यामे, विरामे, अभिरामे, मनोविरामे, विश्रामे, रसाले, विशाले ! हीयो । श्रीशुकदेवजी कहैं—हे राजन् ! जब नन्दके छैयाने गैया बुलाईं, सोई तौ सब गैया पूंछनकौं उठाय-२ कें कूदती, चौकड़ी, मारती, रंभा-वती श्रीकृष्णकेपास चलीआईं । भलौ राजा ! ऐसौ कौन कर्महीन अभागौ होयगौ जाय श्रीकृष्ण बुलामें, और वो न आवै, अबतौ गैया श्रीकृष्णके पास आयकें कोई पीठकों, कोई पेटकों, कोई पांवकों, कोई हाथकों चाटन लगीं । तब सब छोरा बोले—भैया ! यापै तो सिद्धाईकौ लटका सांचौ आवैहै । भैयाकनुआं ! यह लटकातौ हमहूं कूं सिखायदै तब आपबोले—भैया ! जापै महात्मानकी कृपा होवै, ताई पै आवै है, तबतौ सब छोरा अपनी-२ गैयानकों घेरलाये और इकठ्ठी करिकें चलिवेकी तैयारीकरी है ।

कृष्णः कमल पत्राक्षः, पुण्यश्रवण कीर्तनः ।

श्रीशुकदेवजीकहैं—हे राजन् ! 'श्रीकृष्ण'—या पदकौ यह अभिप्राय है कि दुनियां में जो अच्छौ कामकरै वाकी तौ बड़ाई होयहै, औरजो बुरौकाम करैहै बाकी बुराई होयहै । यहाँ तौ राजा ! अनौखेनकी सब बात अनौखीहैं । गधानकौंतौ मार चुकेहैं तऊ 'पुण्यः श्रवणकीर्तनः'' पुण्यहै नाम, पवित्रहै श्रवण नाम सुननौ और संकीर्तन जाकौ अथवा "पुण्यानां पुण्यवतां उत्तमश्चलोकानां नलादीनां श्रवणयोः कर्णयोः कीर्तनम् यस्य" पुण्य करनवारे जो नल-युधिष्ठि-रादिकहैं, तिनके काननमेंहै जाकौनाम ।

यद्वा-"पुण्येश्रवणे कर्णयोः वेणुगानं यस्य स" ।

पवित्रहै जांय कान जासौं ऐसौ कीर्तन अथवा वेणुगान जाकौ, ऐसे श्री कृष्ण (कमल-पत्राक्ष) अर्थात् कमलपत्राक्ष या पदसों पौगण्डावस्थाके होतेभी किशोरावस्थाकौ आविर्भावजतायौ । क्योंकि यहरीतहैकि जो एक बगल कौ हंसैहैं और दूसरी बगल कौ न समघै तौ वामें रसाभास होयहै । यासों श्री शुकदेवजीने पौगण्डावस्थामें ही किशोराविर्भाव कह्यौहै । पहिलें सूधे चलते

अब टेढ़े चलनलगे, पहलें सूधी आंखिनसों देखते, अवतिरछीनजरे, सों देखेंहैं, पहलें सूधीबातकरते अब रंग भरी बातकहैहैं, अथवा आपने विचारीकि अब गोपिनके घरनमें चलेंगे सो कटाक्ष बांण विनके बचायवेकों कैशोरावस्था प्रादुर्भावनकरी मानों कवचही धारणकियौ, जो वेबाण लग-२ कें तराक-२ टूट जायेंगे, कमल दलके समानहैं नेत्रजाके, यामें देखौ ! कमल सीरौ होयहै नेत्रहूँ सोरे होयहैं। कमलकों देखकें ताप जायहै, यहाँ नेत्रनके देखवेते गोपिनकौ विरहजन्य तापजायहै। कमल सरोवरमें उत्पन्नहोयहैं यहाँ नेत्ररूपीकमल रूप सौन्दर्य सरोवरमें उत्पन्नहैं, कमलनपै भ्रमरानके झुण्ड झुमरार खायेंहैं, यहाँ नेत्रकमलनपै गोपीनके मनरूप भ्रमर मंडरायमेंहैं। (वंशी विरणयन्) वंशीकौंबजावते। वंशी क्यों बजाई ? वंशीयों बजाई कि जबराजानकौ कूच होयहै तब हुशियारीकौ नगाड़ौ बजायदीयौ जायहै, यहाँबंशीकों न बजाई, मानौ गोपीनके हुशियार करिबेंकों नगाड़ौही बजायौहै, कि अरी प्यारीऔ ! मैं आऊंहूँ, अब जल्दी-२ अपने लहंगा, लूगरा, आभूषण पहर हुशियारहैजाऔ, जो बंशीकी ध्वनिसुनी सोई गोपी "पटिया गुहाय, मांगभराय, सज-बजकें बन-ठनकें नारी, ओढ़ पीतपट बहुमोलकी सारी, जामें संजाय लगीकारी, ताके ऊपर कटेमालगी सुरख किनारी, रूपकी उजियारी, पटिया मुतियनसों पारी, कान में पहरे बाला-वाली, पायल झंकारी, कर कंकण-कगनारी, नथमणि कमल-कारी, जिनमें लटकनकी लटप्यारी, कवि कहन बुद्धिहारी, नन्दगाम बरसाने वारी, संग श्रीवृषभानुदुलारी, करी दर्शनकी त्यारी"। श्रीशुकदेवजीकहैं—हे राजन् ! या प्रकार सब अपने घरनसों झुण्ड के झुण्ड गली-२ सों अपनी अलीन कों बुलावन चलीहैं, कैसे ? सो कहै हैं–अरी ब्रजनारी ! रसिकनके हृदयकपाट खोलवेकी त्यारी। अरीहे प्रीतवेल सींचवे की झारी ! अरी भैंनाऔ ! नन्द-नन्दके आयवेकी त्यारी, क्यों लगावौ बहुत वारी, करौ चलिवेकी जल्दी त्यारी, चलौगीअवारी, दर्शन नहीं होंयगे गंवारी, चलौगी सवारी, तौ देखौगी गिरधारी। यहाँ भीरके मारे आज फिरे गिरधारी, फटजायगी तुम्हारी सारी, फिर खाऔगी गारी, फिर भारी-२ ही डोलौगी। याप्रकार सवब्रजनारी अपनी -२ सखीनकों बुलावन चलीहैं, सो जायके छातपै, छज्जेनपै, छत्तिनपै, दुछत्तिन पै, खिरकीनपै, गोखानपै, मोखान पै, झरोखानपै, जारिनपै, तिवारिनपै, अटा-अटारिनपै, बारहद्वारीनपै मुड़गेलीनपै ऊंचे-नीचे दुखने-तिखनेनपै, चौखने, पचखनेपै, छठखनेपै, सतखनेपै, अटा-अटारीनपैसौं ब्रजकीनारी वृन्दावनबिहारी के दर्शन करिवेकों सामनकी सी घटामें, बिजुलीकी सी छटा, अटा-अटारीनपै

छागईहै। कितनीकगोपी चन्द्रशालानमें बैठीहैं, जिन्हें भाषामें चौबारे कहैहैं। व्रजकी सांकरीगलीन में द्वार-२ पै, बजारनमें नाके-२ घाटे-२ नमें या जातकी भीर भई जो नतौ देखिवेमें आबैहै और न कहिवेमें। ऊपरबारी नीचेबारीसों कहै—अरी महर! आउ कछु रज उड़ती मालुम पड़ैहै, सो अब थोरी देरमें नन्दकिशोरके आयवे की त्यारी दीखैहै। व्रजके गोंडेमें आय पौंचेहैं, भैनाऔ! यद्यपि आयवे-जायवेमें बराबर आनन्दहै, फिरहू सखी! आयवेमें बड़ौ आनन्द है। जब आप व्रजसों गैयाचरायवे जांय तब चार-पहर दिनकौ वियोग होयहै। सो भैनाऔ! हम रोय-पीटके दिन व्यतीतकरैहैं। यासों भैनाऔ। जो आयवेकी लीलामें आनन्दहैं, वहजायवेकीमें नहीं याप्रकार यहाँसब आयवेकी बाटदेखरहीं हैं। श्रीशुकदेवजी कहैं—हे राजन्! जब प्रभुने गऊनकों घेर, पधारवेकी तैयारी करी सोई बलदेवजीकों मैयाके कहिवे की यादआई जो मैयाने कही—सुन दाऊ! भैयाको हिलाय मिलायकें हंसाय-रिझायकें खबाय-पिवायकें लैयो। ये बात यादकरकें दाऊजीनें कहीकि—भैयाओ! मोयतो बड़ी भांग चढ़ीहै। तब कोऊ छोराबोलौ—भैया! कैसो लहरें दीखेहैं? तब दाऊजीनें कही—सारे! बोले मतीना। कछु कहिवेकी बात नहींहैं मोकों तो आज गधाही गधा दीखेहैं। तब सबसखा हँसनलगे। इतनेमें ही मधुमंगलहू आयगयौ, सो गणेशजी की पूजा करायकें कछु बतासे-लड्डुआकीसी पोटरी लायौहो, सो तुम जानौ 'वामन' महालोभी, वा पोटरीको वढ़े-२ दुबकावेहै कि कहूँ छोरा मेरे लड्डू-बतासेनकों न लुटवायदें। सोई एक ठठोरिया छोरानें दाऊजीसों कही—भैया! देख येसारौ मधुमंगल कहूँसों लड्डू-बतासे लायौहै, सो भैया! या समय या भांगकी तरंगमें रंगत देयगी। सोई दाऊजीनें कही—तुमारी ऐसीही मरजी होयतो लूटलेउ। सोई तो सब छोरा चारों तरफसों अर्रायपरे और मधुमंगलकी बगलसों पोटरी छुड़ायकें और दुपट्टाकी गाँठ खोलकें सबछोरा १-१-२-२ बतासे खायगये। एकाधही लड्डू बचौ। तब मधुमंगलकौ मनरूआसौसौ है गयौ, और आंखिनमें आंसूभरआये। तब भगवान्‌बोले—सारे रोबै क्योंहै? चल घरमेंचल। मैयासों कहिके तू कहैगौ वितने बतासे-लड्डू बंधवाय देउंगो। सोतापै लैकें चलौहू नांय जायगो, इत्यादि बातें करते, हंसते-हंसावते मार्गमें अनेक लीलाकों करते पधारे हैं:—

स्तूयमानोऽनुगैर्गोपैः साग्रजो व्रजमाव्रजत्।

श्रीशुकदेवजी कहैं—हे राजन्! अनग गोपन करिकें स्तुति कियेगये नन्दकुमार, वड़ेभैया बलदेवको संगलैकें व्रजकौं पधारे। याकौ यह अभिप्रायहै,

जय-२ ध्वनि करते-२ जांयहैं । और अनेक प्रकारके प्रभूके यश कहि-२ कें स्तुति करते जांयहैं, ऐसे अपने मित्र ग्वाल-बालनकों संगलैकें अथवा:—

गा: श्रीमद्भगवदाज्ञा रूपवाणी ।

पाययन्ति तेगोपा: देवास्तै: स्तूयमान: ।।

गा नाम भगवत आज्ञारूप वाणीकौं जो पालन करैंहै वेगोप नामइन्द्र, ब्रह्मा, रुद्रादि देवता, तिन करकें स्तुति किये गये अर्थात् वा समं सब देवता अपने-२ विमाननमें बैठकें दर्शन करिवेकौं आयेहैं, वेसब स्तुति करैंहैं, हेप्रभो ! आपनें या दुष्ट धेनुकासुरकों मार हमारौ दुःख दूर कियौ ।

यद्वा वंशोनादद्वारा प्रकटिता ।

मधुरवाणी पिबन्ति ते गोपा: भृंगास्तै: स्तूयमान: ।।

वंशीनादद्वारा प्रकटित जो मधुरवाणी ताकों पान करनवारे गोपनाम भौंरा तिनते स्तुतिकियेगये भगवान् कों वृन्दावनमें पधारौ, देखकें विरह-व्याकुलहैकें प्रभूके पीछे-२ भू-२ करते जायहैं । सो मानौ कहिरहेहैं कि हे प्रभो ! आजको दिन तौ आपके दर्शन से बड़े आनन्दसों बीतौ । अब हम आपके दर्शनबिन कैसें समय व्यतीत करैंगे । तब आपकहें—मेरे मित्र भ्रमरौ ! तुम दुःख मतकरौ, मैं प्रातःकाल ही तुम्हारे पास आयजाऊंगो । तब फिर मेरे दर्शन करियो । फिरतौ वे भौंरा, कमल-कदम्बनके पुष्पनकी सुगन्धि कों छोड़के चन्दन जामें लग रह्यौ हौ ऐसी बनमालकी सुगंधिके लोभसों पांतनकी पांत भूं-२ गुंजार करते चले आमैंहैं, बगदैं नहींहैं, पीछे-२ चले आवैं हैं । ऐसें मैना, तोता, सारस, कबूतर, खंजन, मोर, चकोर आदि अनेक बनवासी पक्षिगण तिनकरकें स्तूयमान अर्थात् यह रीतिहैकि जैसें कोई काईकें मेंहमान आमैंहैं, और बोवाकी सब तरहसों खातरी करैहै और वह मेहमान घरकों जायहै तब वे सब वाकौं पहुंचायवे जांयहैं, ऐसे यहाँ प्रभू वनमें गाय-चरायवेकों पधारे सो मानौं महिमान आये । क्योंकि बन, पखेरून कौघरहै, सो जब आप गऊचरायवे पधारेहैं । सो मैना, तोता, चकोरादि पक्षीगण पीछे-२ नहीं, मानौं पहुंचायवे आयेहैं । अब श्रीशुकदेवजीकहैं—राजन् जासमय प्रभु बनतेपधारे सोई सूर्य नीचौहैगयौ । हे राजन् ! हमें तौ यह मालुमपरैहै मानौं सूर्य आकाशवासकों छोड़कें श्रीकृष्ण रजमें लोटवेकों धरती पै चलौ आवै है । श्रीशुकदेवजीकहें—हे राजन् ! जा समय आपपधारे वासमय गऊनकी

रज उड़कें कछु अलकनपै, कछु पलकनपै, कछुमोर-मुकुटकी झलनकपै, कछु हीरापै, कछु हारपै, कछु मुखारविंद वीराप, कछु कुण्डलनपै, कछु तिलकपै, वो रज जो पड़ीहै और सब अंगनपै पड़ीहै, सो वासमय कैसी सोभा है रहीहै मानौं नीलकमलपै परागही झलकरह्यौ है, पसीनाकी बूंद नहीं मानौ ओसके कणहैं । चलतेमें बंशी जो बजाई, जसें राजा, तीर्थ यात्रा करिवेकोजाय, और पीछेसे गनीम चढ़ि आवै और आयकें सूनौं समझकें अपनौ अमल करिलेय है, अपनीं फौजसों वाके नगरकू घेरलेयहै, ऐसें ही यहाँ श्रीकृष्णरूपराजा, गोचारण रूप, तीर्थकों पधारे तबगोपोनके देख रूप नगरमें आयकें विरहरूप 'गनीमने' आयकें अपने दुःखसंतापादिक सिपाहानकीफोजकों संगलैकें अपनौ संगकरलीनौ है । सो जब राजा तीर्थ करिकें आव और वाकी ध्वजा फहरावैहै तथा नगाड़ेन कौ डंका शब्द होयहै तब जसें--वो गनीमभाग जायहै, ऐसें जब श्रीकृष्ण गोचारण तीर्थसों आये सो रज नहीं उड़ो, मानौ ध्वजा फैराई है । बंशोकौ शब्द न भयौ मानौ नगाड़े की चोट लगा, ताकौं सुनिकें विरह रूप गनोमने विचारी कि-रे मालिक आय पौंचौहै, फिर पिटकें, धक्कादेकें, नार पकरकेंऊ तौ निकासौ जाउगो, सो पैलैं ही दुःख संतापादिक सब सिपाहानकों लैकें गोपीनके देहरूपा नगर ते भाग हीतौ गयौ ।

आगमन वर्णन—श्रीशुकदेवजीकहें—हे राजन् ! सांयकालकौ समय भयौ, सूर्यनारायण नीचे हैगये, तेज मंद हैगयौ । तब श्रीयशोदाजी द्वारपै आयकें कृष्णके आगमनकी वाट देखतीं रक्षादीपको हाथमें लैकें खड़ीहैं । तदनन्तर सब व्रजसुन्दरी भी द्वारपै खड़ी हैगईं । तब एकगोपी ऊंचे महलपै चढ़िकें ब्रजके मार्गकीतरफ देखनलगी । तव कछु गोरज उड़तीदेखी, मंद-२ वंशीकी ध्वनि सुनाईदई । गऊको रज, मुकुटकी झलक दिखाईपरी, देखकें सखीनसो कहनलगो—अरी भैना ! प्यारे प्राणनाथ, ब्रजके आनन्ददैवेकों आयरहेहैं । ऐसौ मोकौं दिखाई परैहै । जब आप समीपही आयपहुँचे तब सखी बोली—अरीभैना ! तैनें कैसेंजानीं, तब वो बोली, – तनक कान लगायकें सुन, देख यह मंद-२ वंशोकी ध्वनिसुनाई पररहीहै, और देख गोरज उड़ती चली आय रहीहै, और जा गोरजमें मुकुट मणिनकी झलक दिखाई दैरहीहै । तब सब गोपी वा रज कों उड़ती देखकें कहन लगीं (तत्र रजसः उत्प्रेक्षा) कि भैना ! यह रजहै कि—पवनकौ समूहहै, या चन्द्रिकाहै, याशिवजीके अंगकी भस्महै । तब एकगोपीबोली—भैना !

रेणुर्नायं प्रसरतिगवां धूमधारा कृशानोः ।
वेणुर्नाय गहनकुहरो कोचको रोरवीति ।।
पश्योन्मत्तो ! रविरभिययौ नाधुनापि प्रतीचीं ।
मा चांचल्यं कलय कुचयोः पत्रवल्ली तनुत्वम् ।।

अरी ! ये रेणु नहीं उड़ेहैं, ये अग्निके धुंआकी धाराहै । और ये वंशी नहींहै, ये वृन्दावनके वनमें बांस शब्द कर रहेहैं, सो अरी सखी ! तू बड़ी बावरीहै । देखतौ सही अभी सूर्य पश्चिम दिशाकों नहीं गयौहै । तू चंचलता मतकरै । देख तौ बावरी ! अपने स्तनपै पत्रबल्ली लिखलै, यह सुनके एक सखीबोली—भैनाओ ! मोकोंतो ऐसी मालुम पड़ैहै कि वृन्दावनकी 'धरणी' भगवानकौं ब्रज आमतौ देख भगवानके वियोग दुःखकों सहन नहींकरती रजकौ रूपधारण करिके आकाश मार्गमें हैके कृष्णसंग प्रार्थनाकरती, हे प्राण-नाथ ! मोकों छोड़ कहाँ जाऔहौ ? आपके बिना मैं कैसे प्राणधारण करूंगी ? ब्रजकों चली आवैहै । अथवा श्वेत कमलकौ श्वेत परागहै, अथवा या समयकी प्रभुकी अनौखी शोभा अवलोकन करवेकों रजकौ रूप धारणकरकें श्रीपतित-पावनी, अधमउद्धारिणी श्रीभागीरथी गंगाही आकाशमार्गमें हैकें ब्रजकों आईहै । अथवा मेघही श्वेतरूप धारणकरिकें मित्र श्रीकृष्णके संग छत्र करतौ पिछारी-२ब्रजकौं चलौ आबैहै । अथवा कैलाशपर्वत रजके रूपकों धारणकर आकाशमार्गमें हैकें श्रीकृष्णचन्द्रके दर्शनकों आवैहै । अथवा ऐरावत हाथी रजके रूपकों धारण करकें आकाश मार्गमें हैकें श्रीकृष्णचन्द्रके दर्शनकरिवेकों श्रीब्रजमें आवैहै ।

—:*:—

※ गोरक्षास्तवः ※

गोविन्द देशस्य करोतु नित्यं
सन्मङ्गलं नायक वर्ग युक्तम् ।
गोवंशवृद्धिर्भवतात् सदैव
सम्प्रार्थयामो विपिने तवाग्रे ।।१।।

अर्थः—हे गोविन्द ! शुभचिन्तकों सहित भारत का मंगल करें इस देश में गोवंश की वृद्धि होवे ।

शास्त्राणि काव्यानि पुराणकानि
गायन्ति वेदाः सततं तथाऽङ्गाः ।
गावः प्रभोः प्राणसमाः सदैव
रक्ष्यास्ततो भो वध वारणेन ॥२॥

अर्थः—वेद, शास्त्र, पुराण, काव्यों में लिखा है कि गाय भगवान् के समान हैं अतः इनका वध कदापि नहीं होना चाहिये ।

प्रपीडितानाँ च जराऽऽतुराणाँ
गवां तथा वत्सतरादिकानाम् ।
नास्मिन् स्वदेशे भवतात् विनाशः
संप्रार्थयामो भगवन् ! तवाग्रे ॥३॥

अर्थः—वृद्ध-दुःखी गाय और बछड़ों का भी इस देशमें विनाश न हो हम प्रार्थना करते हैं ।

खादन्ति सस्यं निवसन्त्यरण्ये
दुहन्ति लोकस्य विवृद्धि-हेतोः ।
गोमूत्रकैः क्षेत्र मनोरथा या,
गावः प्रपूज्याः सतत नराणाम्,॥४॥

अर्थः—जो गाय वनमें उत्पन्न घास तृण खाकर अमृत तुल्य दूध देती हैं, गोमूत्र-गोबर से जो अन्न वृद्धि करती हैं वे गाय मानवमात्र की पूज्य हैं ।.

हे श्याम ! कारुणिक मङ्गलनामधारिन् !
वृन्दावनेश ! निज भक्त जनार्तिहारिन् !
सम्मानयोग्य सुख शान्ति सुधा प्रसारिन् !
गोवंशनाशमवरोधय हे विहारिन् ! ॥५॥

* व्रज भूमि और बाकी संस्कृति *

जा तत्वकों वेदननें अव्यक्त कह्यौ, मुनिनने जाहि अन्तरात्मामें रहबे वारौ 'व्रत' कह्यौ, योगिन ने जाहि 'सर्वं खल्विदं ब्रह्म' की दृष्टिते गायौ, दर्शन शास्त्र के ज्ञानिन ने जाहि 'सत्ता' रूप में समझायौ और बुद्ध सम्प्रदाय वारेननें जाहि 'बुद्धि' रूप कह्यौ ऐसौ वो तत्व गैया चरायवे वारेन की प्यारी या व्रजभूमिके रूप में साक्षात् दिखाई पड़ै है–एक कवि ने कह्यौए–

अव्यक्तं श्रुतिभिर्न्यगादि मुनिभिः स्वान्ते व्यचारि व्रतं ।
ब्रह्मैतन्निखिलं जगन्निजधिया न्यध्यायि सद्योगिभिः ।।
सत्ता दार्शनिकैरभाणि यदहो बुद्धिश्च बौद्धादिभि– ।
स्तत् साक्षादवलोक्यते व्रज भुवि प्रेमास्पदं धेनुपाम् ।।

ये व्रजभूमि युग युगान्तरन ते धर्म की और संस्कृति की तो मैया रही है । धर्म तो व्रज को मेरूदण्ड है । शरीर और प्राण की तरियां व्रज और धर्म एक दूसरे पै टिके हैं ।

धर्म को अर्थ "यतोऽभ्युदय निःश्रेयससिद्धिः" अर्थात् जाते उन्नति होय कल्याण होय ये है, चाहै "धारणाद्धर्मः" करो पै या में नैतिकता–आदर्श वादिता–लोकोपकारिता कौऊ भाग समझनौए, संग में उदारता–विशालता और इष्टके प्रति सर्मपित भावना हू ।

व्रज तो अनादिकालते ही भारत को प्रमुख धार्मिक केन्द्र रह्यौ है–

तावाँवास्तून्युश्मसि गमध्यै ।
यत्रगावो भूरिश्रृंगा अयासः ।।
अत्राह तदुरुगायस्य वृष्णः ।
परमं पदमवभाति भूरि ।। ऋग्वेद विष्णुसूक्त०

या ऋग्वेद की प्यारी ऋचा में तो श्री विठ्ठलनाथजी महाराज गोसाईं जी ने एवं अन्य वैष्णवनने लिख्यौए कि "मैं उन गोकुल वृन्दावन धाम की कामना करूं जहाँ लंबे सींग बारी गाय विराजे हैं, जो श्रीकृष्ण कों प्रिय गोष्ठहै" इतनौई नहीं अनेक धार्मिक सम्प्रदायन को जन प्रचार करवायबे में ब्रज की भूमिका उल्लेखनीय तो रही है याय कौन सो विद्वान्

नांहि जानै । व्रज कौ ये गौरव योंई नाहि मिल्यौ' याकी त्याग भावना-तप-श्चर्या के बाद ये प्राप्ति भईए । अनेक मतन के ज्ञाता अनेक धर्मन के अनुयायी या एक भूमि पैई रहते रहै और अपनी विचार धारा प्रसारित करते रहे येई तो है व्रज भूमि की धर्म तंत्र में स्थिर भावना । या भूमि ने इनजैन-बौद्ध-शाक्त-शैव-आदि धर्मन की नींव धर कें या निर्माण करकें छुट्टी पाई होय सोऊ नहीं, याने तो इनकी बिरोधी विदेशी आक्रामकनते-विध्वंसकारी ताकतनते बड़े बड़े प्रकोप हू सहै ऐं । अब थोड़ों दिग्दर्शन यहां करावैं—:

बैदिक धर्म—ये सबते पुरानों धर्म है—याके दो तत्त्व रहे हैं, देवतत्व-यज्ञतत्व, ये दोनोंई व्रज में समाये रहे । वाल्मीकि रामायण ते ज्ञात होय है कि यहाँ यज्ञ करवे वारे ऋषि माथुर अयोध्या गये, वहाँ ते लवणासुर कौं मारवे के लिये श्रीराम के भैया शत्रुघ्नजी कौ लेकें आये । वैदिक भाषा को विकास या भूमि तै अधिक भयौ ए ।

अवैदिक धर्म में—नाग पूजा, यक्ष-पिशाच पूजा आदि आवें हैं, वेऊ यहाँ विकसित रहे हैं । विद्वानन् को मत है कि छठी शताब्दी तक यक्ष पूजाही या भूमि में । और नाग पूजा के स्थान कौं महा स्थान कहतै, जो आज 'थान' कहावैं । मथुरा को तो नागटीलौ प्रसिद्ध है ही यहाँ नाग देवता पूजे जायें । 'जखन गांव' यक्ष पूजाते सम्बद्ध मानौंई जाये ।

गर्दभ यक्ष—की पूजा की बात लिखी है पै अभी तक ये जीवित है—भारद्वाज गोत्री पाठकन में व्याह के समैं घोड़ी के स्थान पै गधा की पूजा हो यहै । सो मेरो तो ये ही मत है किये वोई भाव चलौ आय रह्योए । जने-ऊवारो छौरा बड़ो सजधज कें सिंगार करके थान पूजवे जायै और बतासे पूड़ी चढावे मुहल्ला के देवन पै । यद्यपि आज कल याकौ नाम घूरो पूजन है जाहि क्षेत्रपाल पूजा कहैं है ।

वैष्णव धर्म—बौद्ध--जैन जैसे अबैदिक धर्म एक ओर फलै फूलै तो वैष्णव धर्म ने यहाँ आनन्द लियौए । वैष्णव धर्म को मूलाधार है भक्ति, और भक्ति तो द्वापरान्त में बूढीउई 'डोकरी' है रही, भलेंई द्रविणदेशन में ते आई और गुजरात में ढक्का खायआई पै व्रज में आतेई वाकौ रूप निखरौ और वोतौ ज्वान बन गई जाय भागवत में देख्यौ जाये—

उत्पन्ना द्रविड़े चाहं वृद्धिं कर्णाटके गता ।
क्वचित् क्वचिन्महाराष्ट्रे गुर्जरे जीर्णतां गता ।।
धन्यं वृन्दावनं तेन भक्तिर्नृत्यति यत्र च ।

यहां तो भक्ति नाचन लगीए । ये 'भक्ति, कर्म-ज्ञान-योगते अधिक महिमा बारी है-नारद भक्ति सूत्र में लिख्यौए--

"सातु कर्म ज्ञान योगेम्योप्यधिका"

रामानुज सम्प्रदाय कौ विद्यमान रंगमन्दिर तौ सुप्रसिद्ध ही है । या ते पहिलैं मधुबन में विष्णु पूजा के प्रमाण हैं, या संप्रदाय में प्राचीनता में गोवर्धन कौ नाम आवै है, यहाँ श्रीयमुनाचार्य के पितामह श्रीनाथमुनि ने तपस्या करी है ७ वीं शताब्दी में । याकूं आजकल यतीपुरा या जतीपुरा कहैं हैं और श्रीनाथजी की सेबा कौ सम्बन्धहू याते जौड़ों जायँ कि पहलै ये ही श्रीनाथ पूजक है, बाद १६ वीं शताब्दी में दुवारा प्राकट्य भयौ--

निम्बार्क--संप्रदाय कौ तो ये गढ ही रह्यौए । राधा कृष्ण की सेवा इनने ही लोक में प्रसारित करी--:

अंगेतु वामे बृषभानुजां मुदा ।
विराजमानामनुरूप--सौभगाम् ॥
सखी सहस्त्रैः परिसेवितां सदा ।
स्मरेम देवीं सकलेष्टकामदाम् ॥

व्रज के गोवर्धन क्षेत्र के नीम गांव ते याकौ नाम आगे बढौए । राधा कृष्ण की घर घर में पूजा निर्बाध विद्यमान है ।

चैतन्य सम्प्रदाय-व्रज में आयकैं जैसो फलौ फूलौ बो तो अनुपम ही है । व्रजकोई योगदान या के बिकास में रह्यौए ।

वल्लभ सम्प्रदाय-वल्लभ मत को तो प्राण ही रह्यौए व्रज । या संप्रदाय के अनेक मन्दिरन ते विराजित ये मण्डल है और प्रतिवर्ष याके आयोजन में देश के दूर भागनते प्राणीं आवैं हैं और व्रज को दर्शन कर अपने ऐ धन्य मानै हैं ।

व्रज में औरहू सम्प्रदाय औ धर्म हैं । उन सम्प्रदायन कौ चिठ्ठा यहां नांहि दैनोए पै स्वामी हरिदासजी की परंपरा को टटिया स्थान तो आज हू, व्रज को प्राचीन गरिमा की छटाते ओत प्रोत है ।

व्रज--की कछु अपूर्व बातें--:

व्रज में कलिन्द नन्दिनी श्री यमुनाजी की विशेष महिमा है 'नमामि यमुना महं' 'धुनोतु मे मनोमलं" ते लेकै आज ताईं "श्रीयमुने तेरौ जस-गावहि ध्यावहि निसिदिन" ।

वर्तमान तक याकौ स्तवन होय है, शुभ कामन के बाद यमुनाजी की गाजे बाजेते पूजा होय है। नगर में काई कें बच्चा होय तो धूम धामते श्रीयमुना पूजा कौ नौतो फिरै है। भण्डारे होंय तो यमुनाजी कौ पैलें भोग धरै एं। छप्पन भोग के मनोरथ यमुनाजी कें करें और मनन दूध श्रीजी पै चढायौ जाये। सेवा पूजा में यमुना जल तो आवै श्रीनाथ जी तक पहुंचैए सांस्कृतिक पर्वन ते देश कों जोड़ें, 'श्रीयमुनाजी,' भैया दोज को तो देश में मुख्य केन्द्र ही है।

महाविद्या—शाक्त-शैवगढ़ तो ये मथुरा रह्यो पै आज तक मान्यता में परिवर्तन कहीं नहीं भयौ। अपनी कुल देबिन की पूजा में बैसोई अनुराग राखैं हैं वैष्णबन में भी कोई दुर्भाव नहीं है। नवरात्री की पूजा में कंकाली-चामुण्डा-महाविद्या-र्चचिका मथुरा नगर में पुजें तो नई सेमरी की जात दैबे दूरि दूरि ते सज्जन सपरिवार आबैं। मथुरा बासी आगरा-गढ़मुक्तेश्वर-गुड़ गांवा आदि की देविन कौंहूं पूजें। घर घर में जगदम्बा की आराधना होय है।

व्रज में राम राम—कृष्णोपासक भलेंईहैं व्रजमें पै भगवान श्रीराम कौ अत्यधिक आदर देखवे ई योग्य है। व्याह होय चाहैं बरात या विदा सव का-मन में राम राम कहिकैं मिलैऐ। छोटे होय चाहें बड़े, चाहुं औरतेई होय कहेंगे राम राम। कारण येए कि भगवान् राघवेन्द्र समुद्र पें पुल बांधवे कौ उपक्रम करि रहै है तब बन्दर पहाड़ ढोय ढोय कैं लाइ रहैए, हनुमानजी जब गोवर्धन कों लेकैं आय रहै तभी खबर लगी कि पुल कौ काम पूरौ है गयौ। हनुमानजी ने गोवर्धन पर्वत व्रजवासिन की प्रार्थना ते यहीं रख दियौ हो, बाकी कृतज्ञतामेंई व्रजवासिन नें हनुमानजी की आज्ञा ते श्रीराघवेन्द्र कौं अंगीकार करि लियौ और राम राम कहिवौ सुरू कर दियौ। पै बगीचिन में श्रीबजरंगबली की मूर्तिन की स्थापना करिकैं बिनकी याद हू ताजी करते रहे हैं। व्रजवासिन की—दैनिकचर्या-रीति रिवाज-रहन सहन-व्रेष और बोल चाल सब कछु एक विचित्रता लिये भई होय है। वृन्दाबनी, पगड़ी या स्वाफा, माथे पै खौर-चन्दन, गले में कण्ठी ऊंची धोती. कंधा पै डुपट्टा या अंगोछा देखिकैं लोग पहिचान जांये कि ये व्रजवासी है। सात्विक भोजन, दाल रोटी, दाल भात औ पायस, पूआ, दही बूरो तो रोज कोई ए। वैसें लडडू इमरती खुरमा जैसे पदार्थनते प्रीतिमानैऐं। प्रातःकाल के स्नान औ ठाकुर के दरसन

नित्य नैम में आमें । सवते कुशलप्रश्न करिकें छाछ-दूध दैवेमें आनन्द मनावें । हंसी ठठोली करिकें परिश्रम की थकान भगावै और ढोला रसिया-मुहचंग-पढन्तादिकनते अपनी साहित्यिक प्रतिभाए जागायें रखें हैं । सबेरें, संजा बगीचीमें टैमबनायकें व्यायाम प्रियजन, अखाड़े सजावें और भारत की मल्लकला की रक्षा करिबे में तत्पर रहें । शस्त्र विद्या कौऊ अभ्यास करें । उत्सब-पर्व-त्यौहारन में अपुनपौ खौमें और दर्शकन कौ मन मोहैंहैं । महोत्सवन में वर्ग भेद कों नसाबें और ब्रज में घूमबे बारेन की सुख सुबिधा कौ ध्यान राखैं ।

ब्रज के कुंड–सरोवरन कौ बचायें बैठे हैं अपने अपने व्यापार में खेती आदि में अन्य कर्मन में वृत्तिकौं रमाबैं, कथा भागवत सुनैं सुनावें, रास रचावैं भक्ति दरसाबैं, सबके मन कौ लुभावें । प्यारे श्यामसुन्दर और श्री राधिकाजू के पदार्पणते जो ब्रज की महिमा बढी वाय १०० शेष शारदाहू कभू बरनन करिबे में समर्थ नहीं हैं सब देश जिनकी अनेकन कलानते प्रभावित भयौ भजौ चल्यौ आयरह्यो है और सदा आतौ ही रहेगो ।

कह्यौए भक्त ने—"प्यारी मोहि लागें वृन्दावन नीकौं" ।

और उद्धव की बात कितनी प्रेम भरी हैं—

आसामहो चरण रेणु जुषामहं स्यां
वृन्दावने किमपि गुल्मलतौषधीनाम् ।
या दुस्त्यजं स्वजनमार्य पथ च हित्वा
भेजुर्मुकुन्द पदवीं श्रुतिभिर्विमृग्याम् ।।

अर्थात् मैं ब्रज में ही बार बार जन्म लऊँ ।

राधा-राधा-कृष्ण-कृष्ण की मिठास ते देस विदेस नाच रहे हैं येऊ तो याकी ही महिमा है । सांची कही है भक्त ने—

कासी औ प्रयाग द्वारावती में निहार आयौ
ब्रजमांह आयौ जब आयवौ कहांरह्यौ ।
गंगा सिंधु सरसुती सरजू में न्हाय आयौ
जमुना में न्हायौ जब न्हायवौ कहा रह्यौ ।

'लाल बलवीर' ब्रजराज की रंगीली छवि
हिये माँहि लायौ जब लायवौ कहा रह्यौ ।
प्रभु प्रसाद पायौ, सीस संतन कौ नायौ
श्री वृन्दावन पायौ जब पायवौ कहा रह्यौ ।

वृन्दावन की पवित्र धरा पै रहिवै कौं पुण्य सहाय करैं क्योंकि ये तो विचित्र भूमि है यहाँ को किलौ सबते न्यारौ है - या में तो श्रीभक्ति देवी कौ परकोटा बन्यौ है । प्रेम कौ दरवज्जो है । सत्य की चौखंडी हैं और दया की देहरी हैं । तपस्या की महराब--जप के कटैरा दया के मुक्ता है । क्षमा के किवार हैं, मौन के कड़ा हैं दान के पंखा हैं । मन की गौख बनी है । ब्रत के परदा हैं-ज्ञान कौ बंगला है, लज्जा के कंगूरा ओ जस की ध्वजा फहरावै है । या दुर्ग के भीतर हीं प्रभु क्रीडा करें हैं--प्यारे की चरनन की धरन, कटिकी किरन हार की झुकनि, परछाई की दिखन, क्षुद्रघंटिकाकी वजनि, पीताँम्बर की कसन, वनमाल की हिलनि, अधर न की हिलन, दंत की चिकसन, वेसर की लटकनि, केस फूलनि की खुलन, भृकुटी की चलन, नैनन की मिलन, प्यारी की जिय को हुलसनि, अंग की ठमगनि, मुख की भेद भेद मुसकनि सारंगी की खिचन, मृदंग की कसकन, थेई थेई करनि, मंडली की किरन पै । ऊपर सों देवन को फूल को बरसन नित्य होय है ।

एक कवि ने ठीक ही कह्यौ ऐ—:

वृन्दावन धाम नीको ब्रजकौ विश्राम नीकौ
श्यामा श्याम नाम नीकौ मंदिर अनंद कौ ।
कालीदह न्हान नीकौ यमुनापय पान नीकौ
रेणुका कौं खान नीकौ स्वाद नीकौ कन्द कौ ।
राधाकृष्ण कुंड नीको संतन कौ संग नीकौ
गौर श्याम रंगनीको अंग युगचन्द कौ ।
नील पीत पट नीकौ बंसीवट तट नीकौ
ललित किशोरी नीकी नट नीकौ नन्द कौ ।

※ भगवान श्रीकृष्ण और उनकौ परिवार ※

भगवान श्रीकृष्ण को स्वरूप अनिर्वचनीय है और ऐसी दशा में बिन के आध्यात्मिक तत्व को विवेचन सरल नांय है।

परम आनन्द को नाम नन्दबाबा है, केवल (ब्रजवासी) रूप लीला पक्ष में है। यशोदा जी साक्षात् मुक्ति देवी हैं, और माँ देवकी जी कंस के कारा गार में बन्दी बनीं (ब्रह्मविद्या) हैं। वसुदेवजी वेद हैं और कृष्ण बलराम दोनों वेद के अर्थ हैं, व्रज की गोपी वेद की ऋचाएं हैं। भगवान के आयुध और उपकरण सभी देव गण हैं जैसे भगवान् के हाथ में जो छडी रहै है वो ब्रह्मा है, कृष्ण जा बाँस की बंशी कों बजावें है वो शिवजी है। कृष्ण को प्रिय वाद्य शृंग इन्द्र देवता है। वृन्दावन के ब्रजरज की ओर स्वाभाविक मुद्रा में नत वृक्ष बैकुण्ठ के तपस्वी गण हैं।

असुर राक्षस—भगवान के परिवार के संग विनके शत्रु साधारण जीव नही रहैं बेऊ वैसेही हैं अर्थात् अघासुर दानव रूप मात्र नही है जैसो कि वर्णित है, वाने गायन के वत्स चारण के समय भगवान कों और ब्रज बासिन कौं मुख में रखलियो हो, वो तो महाव्याधि है और भगवान महाव्याधि को हटावें येही या लीला कौ सार है।

राजा कंस—राजा कंस उग्रसेन को पुत्र मात्र नहीं है वो तो साक्षात् 'कलि' है।

कुवलियापीड हाथी—दर्प कौ नाम कुवलियापीड हाथी है। कलि के साथ दर्प कौ रहिबौ स्वाभाविक है। भगवान दर्प दलन हैं। (अभिमान चूर्ण है जायै है तब कलि कौ अंत होय है) अतः मथुरा में हाथी कों मार कैं ही आप कंस रूप कलि कौ नाश करैं हैं। शम (इन्द्रियों का शमन करनौ) ही सुदामा है और सत्य ही अक्रूर बनौ है। दम (इन्द्रियों कौ दमन करनौ) ही उद्धव है। भगवान कौ सखा वो बन सकेगो जो अपनी इन्द्रियन कों जीत सकेगौ या दमनकर सकेगौ। रोहणी मैया ही दया की मूर्ति हैं।

रानी—भगवान की सोलह हजार एक सौ आठ रानी हैं बे वेद की ऋचाएं हैं। या वेद पारायण की १६१०८ संख्या कृष्ण की पत्नी कही गयी

हैं। मथुरा-ब्रज-द्वारका तीनों स्थान अलौकिक हैं। प्रभु अजन्मा हैं, नित्य हैं, अविनाशी हैं एवं सनातन हैं आदि देव हैं, पुराण पुरुष तथा प्रकृति से परें हैं भक्तन के अत्यन्त निकट हैं।

लौकिक परिवार—लौकिक परिवार में हू वे अपनौ व्यक्तित्व दिखावें हैं। और विभिन्न नाम धारी जीव अपने बनैं हैं, अनाम होयें हैं, साधारण जीवन की भांति एक देश में बँध कैं नाम रखैं हैं। अजमीढ नामक क्षत्रिय के दो पत्नी हीं, एक क्षत्रिय पुत्री, दूसरी वैश्य पुत्री। वैश्य पुत्री ते पर्जन्य नामक पुत्र भयौ और पर्जन्य के पुत्र कौ नाम नन्दबाबा भयौ जो कृष्ण भगवान के पिता हैं। क्षत्रिय पत्नी के गर्भ सों अजमीढ कें शूर नामक पुत्र उत्पन्न भयौ और शूर कौ पुत्र वसुदेव भयौ जो कंस राजा की चचेरी बहिन देवकी को पति बनौ। कृष्ण की दादी कौ नाम वरीयसी हो नानी कौ नाम पारला हो। बड़े चाचा उपनन्द हैं और अभिनन्द हैं, छोटे सानन्द एवं फूफा कौ नाम नील, भुआ नन्दनी, और मौसी यशोधरा ही। माँ देवकी के पक्ष में कृष्ण के मामा कौ नाम कंस राजा। नाना उग्रसेन। कृष्ण के मामा की पत्नी अस्ति औ प्राप्ति हीं वे जरासन्ध की पुत्री ही। बहिन सुभद्रा ही।

सखा—कृष्ण के अभिन्न मित्र विशाल, वृषभ, दाम और सुदामा हैं।

दर्जी—दर्जी कौ नाम रोचक। रंगरेज कौ नाम सुमुख हो।

कुत्ता—भगवान के प्रिय दो कुत्तान कौ नाम हू, उल्लेखनीय है वे है व्याधि और भ्रमरक।

सांड—प्रिय सांडन कौ नाम पद्म, गंध, दिशंग हो।

या प्रकार बिनके पूर्ण परिवार कौ उल्लेख बिनकी सखीयन कौ वर्णन सँस्कृत साहित्य में प्राप्त होय है बिनकी यह अनेकता ही बिनकौ विराटत्व सिद्ध करै है।

एक कवि ने तभी तो बिनके जनम पै लिख्यौए—

पूत सपूत जन्यौ जसुधा इतनी सुनकें बसुधा सब दौरी
देवन के आनन्द भयो सुनि धावत गावत मंगल गौरी।
नन्द कछू इतनौ जु दियो घनस्वामि कुबेरहु की मति बौरी
मोहि देखत व्रजहि लुटाय दियो न बची बछिया छछिया न पिछौरी।

—:※:—

आध्यात्मिक पक्ष—:

बाबा नन्द—आनन्द है
श्रीयशोदा जी—मुक्ति देवी
वसुदेव जी—वेद
देवकी—ब्रह्म विद्या
कृष्ण बलराम—वेदार्थ

गोपियां—वेद की ऋचा
बंशी—रुद्र
छडी—ब्रह्मा
श्रृंग—इन्द्र
वृक्ष—तपस्वी

असुर—:

अधासुर—व्याधि
राजा कंस—कलि
कुवलियापीड हाथी—दर्प(अभिमान)

लौकिक—:

अजमीढ की दो पत्नी—वैश्यानी—क्षत्रियाणी
क्षत्रियाणीसे—शूर से वसुदेव
वैश्यानी—पर्जन्य—नन्द
कृष्ण की दादी—वरीयसी
चाचा—उपनन्द, अभिनन्द, सनन्द
फूफा—नील
भूआ—नन्दिनी
मौसी—यशोधरा

देवकी पक्ष—:

मामा—कंस
माईं—अस्ति, प्राप्ति
नाना—उग्रसेन
बहिन—सुभद्रा

पुत्र—: एक लाख इकसठ हजार अस्सी (१६१०८०)
रानी—: सोलह हजार एक सौ आठ— (१६१०८)
दर्जी—रोचक, रजक—सुमुख

कुत्ता—व्याधि, भ्रमरक
वृष—पद्म जंघ, पिशंग

—※—※—

(९)

* शरद् ऋतु को महिमा *

शरद की रात जब आबै ए तो व्रज में ऐसो भाव मानेंऐ कि आज भगवान् के रासकौ दिन आयगयो ऐ।

आज की रात में ई व्रज के बाजेन की ध्वनि ते ब्रह्माण्ड भरि गयो ओ। रास लीला के बाजे कम थोरेई ए अनेकन है। डफ, मुहचंग, वीन, मृदंग डिमडिमी, तबला, सारंगी, सितार, झालर, मंजीरा, डमरू, मुरली, बाँसुरी करबीन, जिहाज, मुद्दबर, तम्बूरा, ढोलक, ढाल, सुरमंडल, सुरवीन, सहनाई, सुरनाई, सुरहीताल, अडवी, वजबी, असर, दुन्दुभी, जलतरंग, नफीरी, खंजरी, खडताल, जिलकरनाई, कानूर, किन्नरी, चंग, ढपंग, धुनछाई, मंजीरा अलगोजा, झांझ, वेणु, मुरज, इकतारे, करताल, आदि बाजे एक संग वजें तो भुवनन को पूरिवो ठीक ही है।

दरसनन की भावना में व्रजबासिन को आज ये भावना होये कि चारों ओर डफन की घोर, दुन्दुभी को सोर, मृदंग की परन, बीन की बजन, खंजरी की धुमकन, तबलन की गुमकन, डमरू की डमकन, मंजीरन की खमकन, करतालन की खड़कन, तानन की तमकन, सुरमंडल की सुरन, सुरबीन की जुरन, सितारे की इचन, सारंगी की खिचन, मुरली की बजन में गोपिन के मुखते बड़े प्यारे सुर निकसि रहे हैं ता में भगवान् को रूप तो देखिवे ही योग्य है:--वो मोर मुकुट की हलन, ललित त्रिभंगी विलसन, लटपटी चीरा की बंधन, पेच की खुलन, अलकन की बिथुरन, भ्रकुटिन की नचन, पलकन की झलकन, मुरली की धरन, ग्रीवा की मुरन, बंशी की वजन, अंगुरीन की नचन, सुरन की भरन, आनंद की घुमड़न, प्रेम की उमड़न, अधर रस की बरसन, भाव भरी हसन, विशाल वक्षस्थल की उठन तापै बैजंती माला की सरकन, हार की हलन, लरीन की लरन, कौस्तुभ की विलसन, भुजान की उठन, कटिकी लचकन पीतपट की चटकन, गजराज की सी चलन या शोभाते शोभायमान नये नुकीलो मुकुट पीरो जाको पट त्रिभंगी लटक, बगलमें लकुट हाथनें कटक मेरे मनकों झटक यमुनाके तट निकट बंसीवट घूंघरवारी जाकी लट जिनमें मन्मथ की फटक मेरे नैनन में अटक प्यारो रासमें पधारोए।

आ आई आति आ आ नटति च विपिनं मन्दवातेरितं आ।
आ आ आ एति कृष्णः पुनरिह निगदन् सालसांगं ननर्त ॥
थो दिक दां दां किट किट कणझैं थोक्क थोदिक्क आरे।
झेन्द्राँ झेन्द्राँ किडि गिडि किडि धां झेक्क झें झकक झो झों ॥
थो दिक द्रां द्रां हमि हमि हमिधा का कृझों झोक झेन्द्रा।
भागत्यैवं नटति स हरिश्चारु पाठ प्रबन्धम् ॥

बादर में चमकती बिजुरी की तरियां श्यामरंग में रंगी ललिता अपने कंगननकूं खनकावती मानों आजहू गाय रहीए:—

झां झाँ कुर्वत् कनकवलये धुन्वतीं पाणिपादौ।
तासां मध्यात् सपदि ललिताप्यागता कृष्ण कान्ता ॥
श्यामे रंगे तडिदिव घने नृत्यतीत्थं वदन्ती।
थैं थैं थो थो तिगड तिगडथैं थो तथैथो तथैंथा ॥

और विशाखाजी की मधुर बानीऊ संगमें कोइलनकूं मात करैए:—

हमि हमि हमि धौं धौं धौं मृदंगाद्य वाद्यः
क्वणति क्वणत् वीणा शब्द मिश्रैर्विशाखा
नटति झणण झाँरमत् कार्यलंकारजाला
हगिडि हगिडि थैं थैं थो तथोथो ब्रुवाणा ॥

आजतो सब कछु सपेदए। पुण्यको संबन्धई स॰.दतेए। कोइल, भौंरा, कुरंग, सबके सब सफेद हैं:—

कोकिल भृंग कुरंग पिक चातक वृक्ष सफूल।
वृन्दाबन अरु मोर सब स्वेत भये सुख मूल ॥

मन्दिरन में घरन में सबरो सिंगार सफेदई होये--मोतिया के फूलनको मुकुट धराबें, पाडल की पाग बनाबें केवड़ा के फूलन की कलंगी, गुलतुर्रा के तुर्रा, कदम्ब के फूलन के कुंडल, जुही के फूलन को जामा फिरंगके फूलनको फेंटा, पीतचमेली को, पटुका धायके फूलनकी धोती, कुन्दनके फूल की झाजन, सुन्दरे के फूलनकी सांकर, केतकीके फूलनको कटुला, रायबेल औ मोतियाके

फूलनकी मूंदरी, जबारेके फूलनकी पौंची, कनकवेल औ गुलाबके बाजूबन्द, दुपहरियाके फूलनके नग पहिराबेंऐं। श्रीलाड़िलीजी को सिंगारहू शरद्‌मेंसफेद रंगको हो भावैए औ गहनेऊ सफेद सोभायमान होऐं—जाफरानके फूलन की झांझन, छुईकी छेलकड़ी, सहदेईके फूलनकी सांकर, सेरतीकी सांठ, अनार के फूलनकी अनवट, केतकीके फूलनके कड़े, कचनारके फूलनके कठला, हारसिंगारके फूलनके हार, नरगिसके फूलकी नत्थ, मोरसरीकी मोमली, बसन्तके फूलकी बिचकन्नी, कमलनके कन्नफूल, बेलाके फूलनको बेंना, बाबूनाकी बेंदी, सूरजमुखीके फूलको सीसफूल, चमेलीकी चंद्रिका, कुन्दनके फूलनकी कंचुकी चांदनी रातमें देखतेई बनैए। आजुकौ चन्द्रमाऊ देखेंई बनैए। भगवान् रासलीला कौ मन करिकें बनमें पधारेंए सो चन्द्रमा बनठन कें व्रजमें उदै भयेए। पूर्व दिसाकौ स्वामी इन्द्रदेवताहै पै चन्द्रमाने ताके मुखकौं रंजितकर दियोए। जा तरियां कोई नायक अपनी प्यारी न्नायिकाके मुखपै केसर कुंकुम को लेप करै। अर्थात् चन्द्रमाने ये दिखायोओ कि मैं तुम्हारौ पुरखाओं औ बुढापेमैंऊ परनायिकाते क्रीड़ामें संकोच नांय करौं जो तुमतो किशोर हो अभी इन गोपिकानके संग रमण करौं। याईतैं व्रजबासी चन्द्रमाकौ बरनन करते थकें नांयहै। कोऊ तो कहै कि ये चन्द्रमा गोपिनके अनुरागकी गठरिया है। कोऊ कहै कि ये गोपिकानके कटाच्छनते बचायबें कों ढालें। कोऊ कहै कि सिंगारको दरपनए। अथवा ये पिया पीतमके बैठिबेको सिंहासनए अथवा गोपिन के मुखकौ ब्याजए अथवा गोपिनको भूसन धरिबे कों पात्रए।

जो कछु पढ़े-लिखेऐं बे यों कहेंकि ये चन्द्रमा मानो तेज धाम ते गिर्‌यो तेजकी बिंदुए। या विराट्‌को नेत्र खुलौए या सतोगुनकी गठरियाए या आकास ब्रह्मकौ कमल दल फूल उठ्‌योए, संसारवृक्षकौ ये फूलए कोई याकौं कामकौ निसान मानैहैतो, कोई कामकौ तकिया (क्योंकि ये उद्‌दीपक है) कोई याकौं सौन्दर्य की खान मानैए और कोऊ तारागणनके धरिबैको टिपारौ तो कोई आनन्द सरोवरकौ कमल मानैं है।

पश्योदेति वियोगिनां दिनमणिः कन्दर्प लीला मणिः।
प्रौढानन्द भुजंग मस्तक मणिश्चंडोश चूड़ामणिः॥
तारा नामक तार मौक्तिक मणिः कन्दर्प सीमन्तिनी।
कांचीमध्य मणिश्चकोर तरुणीचिन्तामणिश्चन्द्रमा॥

बियोगिनकौं जराईबेकौं ग्रीष्मकौ सूर्यहै, संयोगिनीनकौं कामदेवकी क्रीड़ा मणि है, प्रौढ़ानके लियें ये मदन मणिधर नागके माथे की मणिहै। पार्वतीके लियें ये शिवके माथेकी मणि, बृहस्पतिजी के लिये कंठाकौं मोती, रतिके लिये करधनी की लटकन तथा चकोरी के लियें तो यह साक्षात् चिन्तामणि ही है।

लक्ष्मी क्रीडातड़ागो रति धवल गृहं दर्पणं दिग्वधूनाम्
पुष्पं श्यामा लतायाः त्रिदशविजयिनो मन्मथस्यातपत्रं
संघीभूतो हरस्यास्मितममर सरित्पुंडरीकं मृगांको
ज्योत्स्नापीयूष वाणी जयति सित वृषस्तारको गोकुलस्य

सखी कहै है अरी तू नहीं जाने--ये चन्द्रमा लक्ष्मीमहारानी के जल विहारकौ कुंड है। रतिके निःश्वास को गोल गुंबज है, देव दिग्पालनकी बधून कौ मुख देखिबेकौ दर्पण है, श्यामा जू राधारूपी लताकौ पुष्प है, सम्पूर्ण देवतानकौं जीतिबे बारे कामदेवकौ विजय छत्र है। भगवान् शंकरकी आनन्द मुसकानकौ भरौ टिपारौ है, आकाश गंगाको विकसित कमलहै, मृगकों गोदमें लिये कोऊ मुनि बालक है, अमृतभरी काहू बावड़ीकौ झिलमिलातौ तरंग जाल है, नारायण रूप गऊन के खिड़क में सफेद सांड़की तरह कुदकिवे बारे या चन्द्रमा की जै होइ।

रास रस मंडप की झालर कौ चंदोआ है
व्रजराज रसिया की पाग की कलंगी है
सोसफूल श्यामा को कदंब फूल नंदन कौ
मौगरा की गेंद पानदान प्रीतिसंगी है
मुदित 'मुकुंद' आरसो है कर्नफूल आली
सांझी की छबरिया रास दीपक उमंगी है
माखन कौ लौंदा है कि काम कौ विजय ढफ
माधव कौं मोर पंख चन्द्र रस रंगी है ॥

मदन मुनीश्वर के तप कौ कमंडल है
तिमिर वराह ऊँची दाढ चमकानो है
पंचबान वानन के घिसिवे की सिल्लो है कि
तारा मीनमंडलीमगरमहामानीहै
मुदितमुकुंदनिसाहथिनी कौ अकुश है
तारी मानगढ कैंची विरह कहानी है
चोरन कौं विध्न दाता आरन कौं प्रियभ्राता
कामनीन कौशल कलान रस दानी है ।

सरदते शिक्षा–या सरद ऋतु ते अनेकन पते की बातेंऊ मिलैं ये कोरो सुन्दरई नांहिनै यामें बड़े रहसभरेऐं, यातें वेदव्यास जैसे विश्व विख्यात विद्वान्ने भागवत जैसी बड़ी भारी पोथी में याकी महिमाकौ गान कियोऐ । सरद ते निर्मल आकास होय है और निर्मल ही पानी होय और बड़ी अच्छी हवा लगे है ।

१–कमलन की उत्पत्ति ते जलासयनकें जल अपनी सहज स्वच्छताकू प्राप्त हौयें । योगते भ्रष्ट भये योगीन के चित्त जा प्रकार फिर योग करिवे ते निर्मल होंयें ।

२–या ऋतु में आकास के वादल नष्ट होंय, वर्षाकालमें जो अनन्त जीव पैदा हौयते नष्टहोय, पृथ्वी की पंक नष्टहोय जलनकौ मटमैलोपन नष्ट होयहै । ये ऐसें नष्टहोय जैसे भगवान् की भक्ति ब्रह्मचारी, गृहस्थ, बानप्रस्थ और सन्यासिन के कष्ट और असुभनकों कर देय है । संक्षेप में याते ये शिक्षा मिलैंऐं––

१–मनुष्यकों अपनी प्रकृति में ही रहनो चहिये ।

नीरजकी उत्पत्ति ते नीर प्रकृतिभावकों प्राप्तभये नीरजकौ अर्थए–'रज रहित' सो रजोगुन त्यागनो चाहिये । या पुत्र पैदा भयेते पिता ऋणमुक्त होय सो नीर ऋणमुक्त है गये क्योंकि नीरज––कमल पैदा भये हैं वेई नीर के पुत्रऐं ।

२-कृष्ण भक्ति करनौ चहिये । याते असुभ दूर होय हैं शरद् ते पंकदूर होय है ।

३-न्याय करनौ चहिये—जैसे शरद में वादल सर्वस्व त्यागकें शुभ्र-बरनते सोभायमान होयें ऐसें ही जो त्याग करे हैं ताको सोभा होय है । कारौपन ही पाप है । सफेद पुण्य को प्रतीक है ।

४-अत: सारवान होनों चहिये । यामें पर्वतनक झरनानको दृष्टान्त है । वे कहूँ पानी देय हैं कहूँ नांहि ।

५-आयु की क्षीणता कूं समझनौ—जो याकूं नहीं समझें वो कष्ट उठावें जैसे थोड़े जलमें मत्स्य दु:खो होय ।

६-इन्द्रियन पै संयम करनौ चहिंये--जो संयम करए वो दु:खी नहीं होय यदि इन्द्रियन जीतें तो दरिद्र कुटुम्बी की भांति दु:ख भोगनों पड़ेहै ।

७-अहंता-ममता को त्याग करनौ चहिये-यामें समुद्रकौ दृष्टान्त है । शरद के आगमन के समय समुद्र कौ पानी स्थिर रहे है । बाय न पानी के कम परिवै को दु:ख है और न आयबे की खुशी ।

८-अपने कामकों दृढ़ता ते करनौ चहिये-जैसें किसान पानी के वाधन ते खेतीकों पानीलेय है ।

९-सबके दु:ख दूर करबौ ही आनन्द है—शरद् के सूर्य कौ ताप बड़ौई कठोर होये है पै चन्द्रमा (जो जलनको अधिपात है) सबकूं सुख दिये है ताप हरै है ऐसे ही सबके ताप हरबे में ही लाभ है ।

१०-निर्मल चित्त करनौ चहिये—शरद में आकास के तारे बड़े ही निर्मल होंयहैं ऐसेही जैसे शब्द ब्रह्म के दरसनते योगी कौ चित्त निर्मल होय । या प्रकार शरद् ऋतुते अनेक शिक्षा ग्रहण करनी चहिये ।

—※—※—

श्रीवल्लभाचार्य–व्रज जिनकौ ऋणी है—

यद्यपि भारतवर्षमें चारसम्प्रदायप्रधानहैं पै जैसोप्रेम व्रजभूमिते श्री वल्लभ ने कियो बाकूं कोऊ सहजई में भूलाय नाहिं सकैहै। व्रजभूमि ने बड़े बड़े झंझाबात विदेशी आक्रमणनकैं सहैएें याईते समै-समै पै महाविभूतिनने अपने पदार्पणनते या भूमिकौं गौरव प्रदानकियोए। औरनकी तो बातई कहाए जगद्गुरु सच्चिदानन्द भगवान्हू यामें प्रगट भये हैं। न केवल प्रगटई भयें अपितु सदा या भूमिमें निवासहू करैं हैं—श्री भागवतजी में लिख्यौ ए कि— "मथुरा भगवान् यत्र नित्यं सन्निहितो हरिः"। श्रीवल्लभाचार्यजीने व्रजभूमि-की, व्रजके ठाकुरकी, व्रजके वैष्णवनकी भूरि भूरिसराहनाकरी। इनके प्रभावके कारण यात्रीनकी संख्यामें दिन प्रतिदिन वृद्धि होतगई और व्रजकी दशा पै मन्दिरन पै धन्धे पै बाकौ प्रभाबऊपरौ। व्रज तो वल्लभाचार्यजी कों गद्गद्हैकैं स्मरण करतौरहयौए करतौरहेगो कारण ये ए कि श्रीयमुनामहा-रानीजी की महिमा कौ गान बिनके दैविक और आध्यात्मिक स्वरूपकौ वर-नन या सम्प्रदाय जैसो अन्यत्र नांय है आजहू सैंकड़न वैष्णव श्रीयमुनाजी में दूध चढ़ावैं और प्रत्यक्ष देव की पूजा करेंहै। श्रीवल्लभाचार्यजी यद्यपि भग-वान्के बदन अनलके अवतारमानें गये हैं पै श्रीव्रजभूमिके तीर्थन में जब पधारे औ व्रजयात्राकरी तो बो श्रीजीनें सफल न मानी। श्रीजीनें स्वप्न दियौ कि माथुर चतुर्वेदी के संग में लैकें व्रजयात्राकरौ तव आचार्यजी ने बड़े चौबेजी उजागरजीकौ संग लैकें बिनके पैर पूजकें यात्राकरी। बिनने व्रज लीलानकौ रहस्यहू कह्यौ। तब यात्रा पूरी भई औ श्रीजीनें स्वीकारकरी। श्रीआचार्य-जीने श्रीजी बाबा बतराते और श्रीयमुना महारानीजी हू बतरातीं। आचार्य-जीकी वाणीते सबतें पैले जो कविता बनी कोऊ व्रज में रची भई श्रीयमुना-अष्टक ताहि कहैं है बाकौ पहलौ श्लोक ये ए—

नमामि यमुनामहं सकलसिद्धि हेतुं मुदा
मुरारिपदपंकज स्फुरदमन्दरे णूत्कटाम्।
तटस्थ नवकाननप्रकटमोद पुष्पाम्बुना
सुरासुर सुपूजित स्मरपितुः श्रियंबिभ्रतीम्

श्रीयमुनाजी सकलसिद्धिन कौं देवैंवारी ऐं और कृष्ण भगवान् कं ई वरन कौ श्याम रूप कौ धारन करै ऐं। श्रीवल्लभाचार्यजी कौं श्रीयमुनाजीकी कृपा तेई ब्रज के छिपे धाम दिखाई दिये है श्रीवल्लभाचार्यने अपनी सुप्रसिद्ध-टीका सुबोधिनीजीऊ या ब्रजधाममें प्रारम्भ करीई। आचार्यजी कौ रूप पतितपावन मानो जायँ। ताज-तानसेन-अलीखान-रसखान-धोंधी नेहा कुंजरी-चहुड़ा आदि अनेक अस्पृश्य जननकौं शरणमें लैकें भक्तन की श्रेणी में स्थापित कियौ। आधुनिक युग के अनुसार बिनने जननकौं पुष्टिमार्ग कौ मध्यम मार्ग बताऔ। प्रातः स्नान करिकैं मिश्रीकौ भोगधरै-चरणस्पर्शकरे-षोडश ग्रन्थन कौ पाठ करैं सर्वोत्तमस्तोत्र-नवरत्न-यमुनाष्टक-गद्यमंत्र-अष्टाक्षरकौ जापतो अवश्यहीकरै आचारकौ सेवन करै—सूरदास आदि अष्टछापके कविनकेपदन-कौ गायनकरै। ऋतु कं अनुसार राग-भोग-शृंगार सामग्री नियुक्तकरै। श्री आचार्यजी के अनुयायी अष्टछापके पद आज विश्वमें छाये भयँऐं ये ब्रजवासिन कौ सौभाग्यहै। ब्रजके लुप्त तीर्थन पै जायके पूजा करिकैं ब्रजवासिनकौं सब प्रकारतेलाभ पहुंचायौ। ब्रजबासिन कौ मान बढ़ायौ—ब्रजबासी वल्लभके मतके अनुयायी है गये होंय ऐसो नाहि है क्योंकि ब्राह्मणनमें आजहू एक प्रति-शतहू या सम्प्रदायके पुरोहित नहीं है। कारण वे अपने मतबादते यहाँ सृष्टि नहीं करनौ चाहते यमुना पुत्रनमेंबिनने दूसरौ भावई देख्यौ हो यहाँ तो राधा कृष्ण घर घर में विराजै एं तो कहूँ अन्य मतावलम्बी अपने पुरानी परंपराते श्रीजी की पूजा में रतहैं तो कोऊ श्रीयमुना मैया को ही गुरु मानैं। बैसे ब्रजमें या दृष्टिते निम्बार्क कौ प्रभावमानो जायँ।

विश्रामघाट पै एक ऐसौ जंत्र लग्यौहो जाके नीचेंते निकसिवेते चोटी उड़जाती और डाढीलगजाती। या प्रकारते मथुरा तीर्थ पे यात्रीनकौ आय वोई बन्द सों भयो तब मथुरा के चतुर्वेदी ब्राह्मणनने श्रीआचार्यजी ते प्रार्थना करिकें ताहि निरस्त करायौ। एसौ कह्यो गयोए कि श्रीआचार्यजी ने एक जंत्र डीग द्वार पै कहूँ लगवायौ दिल्ली आगरा कौ मार्ग पैदल औ घोड़ान तै होतौ सों जो यवन निकसै वाकें चुटिया लग जाती ये बात जब दिल्ली दरबार में पहुंची तो वहां ते आज्ञा भई कि दोनों अपने जंत्रन कौ हटायलें। याते मथुरा वासीनकों बड़ौ आनन्द भयौ और तीर्थयात्री आमन लगे। 'बहुलाबनमें' एक गौकी पूजा ब्रजबासीकरते। एक यवनशासकने हुकम दियौ कि ये गाय यदि घासखायतौ पूजाकरौ नाहितो पत्थरकीपूजा वन्दकरो। अबमूर्तिपूजा बाद होनलगी, सब दुःखी भये। ब्रजवासिनकों पतौ लग्यौकि श्री आचार्य जी ब्रज परिक्रमा करते आयरह्य हैं, सवने बिनती करी। श्री आचार्यजीने अपनो

चमत्कार दिखायवे कों बा यवन अधिकारी कौं हू बुलायलियौ और बा पत्थर की गायकी पूंछकी तरफ घांस पटकबाई, पत्थरकी गाय हिलनलगी औ घूम कें घास खायगई । तबतौ बो यवन हूं झुकगयौ औ अपनौ आदेश स्वयं ने ही नष्ट करिदियौ । ब्रजबासी अपनेकौं आचार्यजी कौ ऋणी मानन लगे ।

आचार्यजीने प्रभु सेवामें सबकों अवसर दियौ—"**कृष्ण सेवासदा कार्या मानसी सापरामता**, ब्रजके अधिनायक श्रीकृष्ण हैं, वेई परम कलानिधि हैं आनन्द रूप हैं" ऐसे उपदेशनते श्रीकृष्ण सेवा पूजाके गायकौ जाग्रत कियौऔ अनेक जीवनकौ उद्धारकियौ । श्रीसूरदासजी अनेक पदनकौ गान कियोकरते एक दिन गौघाटपै बिनकीं भेंट आचार्यजी ते भई-जब आचार्यजीने कह्यौ कि– सूर है कें काहेकों घिघियातुहै कछु भगवल्लीलानकौं गानकर" तब सूरनें दीक्षालीनी और सूर भारतके सूरजवन गये—"सूरसूरतुलसीशशी" जैसी उक्ति हू प्रचलित है गई । इनकी आज्ञाते जो सूर ने पद लिखे वे सूरसागर के नामते प्रसिद्ध ग्रन्थ बन्यौए । श्रीवल्लभाचार्यजी ने ब्रजधामकी सेवा-साहित्य प्रणयनते-संगीत की कीर्तनप्रणालीते-मन्दिरनके भोगराग-श्रृंगार-लाढलढायवे आदि ते जैसी करीए वाय कोऊकवहूँ भुलाय नाहि सकै । आपके कारण ब्रज भाषा और हिन्दी साहित्य दोनोंनकौं जीवन मिलौ भगवत्सेवा में साहित्य-संगीत-ललितकलाओ उपयोगी दलानकौं स्थान दैकें बिनै जीवित रखवे कौ प्रयत्न कियौ । सामाजिक एकताकौं बलदियौ । श्रीमद्भागवतजी कौं प्रस्थान चतुष्टयी में स्थापित कियौ और भागवत पुराण कौं बढ़ाबौ दियौ जाते ब्रजके पण्डित घरानेन में अच्छे अच्छे भागवतके पण्डित भये । देश में भागवत की कथा के व्याजते यहां के पण्डितनने जो ब्रजभाषाकौं जीवित रखबे कौ श्रम कियौ वाकौ श्रेय श्रीवल्लभाचार्यजी कौ ही है । ब्रजोठाकुर रसिक शिरोमणि है याते कीर्तन पदनतेई बायउठानों–सेवाकरनी भोग लगानौं और पद गायन तेई शयन करनौं ऐसो भाव या सम्प्रदाय ने पैदा कियौ जाते ये ब्रज उपकृत भयौए । "गुणमाने सुखावर्गप्तः गोविन्दस्यप्रजायते" अर्थात् भगवान् के गुण गायबेमेंई सुखहै और बिनके बिमुख है बो बिनाश कौ मूल मानौए ।

श्री आचार्यजी की एक ब्रजयात्राई ऐसी देन है कि जाते पूरौ ब्रज अर्थलाभते लाभान्वित होय उपदेश कीर्तन ते गौरव युक्त अपने कौ मानैए । श्रीआचार्यजीकी ब्रज के प्रति जो भावना रही बोई ब्रजवासिनके लिये बड़ी देंन है । आचार्यजीनें अपने कौ ब्रजकौ ऋणी मानौ पै ब्रजवासीया ब्रज आजहू बिनै अपनौ स्नेही मानैं । ब्रजबिनकौ ऋणीहै यामें कछु संशय नहीं है ।

※ जगद्गुरु श्रीमद्वल्लभाचार्य ※

श्रीमदाचार्यबल्लभ पतितपावन स्वरूप माने जायें हैं। ताज, तानसेन अलीखान, रसखान धोंधी--मेहा कुंजरी, चहुड़ा आदि अनेक अस्पृश्य जननकों शरणमें लेकैं भक्तनकी श्रेणीमें स्थापित कियो और सिकंदरलोही, नारायणदास दीवान, सिन्धके बादशाह, गुजरातके शाह अहमदशाह अकबर, गढ़ाकीरानी दुर्गाबती, मानसिंह, बीरबल आदि अनेक चक्रवर्ती राजामहाराजान पँऊ आपने कृपाकरीए आधुनिक समयकी बिषम स्थितिकों देखते भये ब्यापार रोजगारनें प्रवृत्त 'मनुष्य' सेवामयजीवन कैसें ब्यतीत कर सकें, आचार-विचारनकौं कैसें निभायसकें, याके लिये पुष्टिमार्ग मध्यममार्गको अवलम्बन बतायौ--इनकी विधिके अनुसार--१-प्रात: स्नानकरकें मिश्रीकी १ कटोरी भोगधरै, चरणस्पर्शकरै, १६ ग्रन्थनकौपाठकरै, सर्वोत्तमस्त्रोत नवरत्न, यमुना-ष्टक, मद्यमंत्र, अष्टाक्षर जाप तौ जरूर करै। मिश्रीकेकण रसोईकी सभी बस्तुनमें पधरावै।

२-बाहरी बाजारू होटलके खानपान, चाय पेयते बचे आचारकौ सेवन करै।

३-व्यस्त रहतेभये स्त्रीहू भगवान्‌के चरणारविन्दनकौ ध्यान करती भई धर्ममय जीवन व्यतीतकरसकें।

४-अष्टसखाकी बाणीमें रुचिरखे, सूरदास, परमानन्ददास, कुंभनदास, कृष्णदास, गोबिन्दस्वामी, छीतस्वामी, चतुर्भुजदास, नन्ददास आदि महानु-भावनकें पदनको कीर्तन करै। प्रभु परम रसिकहैं कीर्तनते जामें, आऐगें और पौढ़ें हैं। ऋतुके अनुसार भगवत्सेबाकौंकरैं तदनुसार राजभोग, शृंगार सामग्री नियुक्तकरें। यथाशक्ति सामग्री प्रभुकौ आरोगायकें लाड़ लड़ावै

पवित्रा एकादशी, जन्माष्टमी, राधाष्टमी, बामन जयन्ती, सांझी नवरात्री, दशहरा, शरद पूर्णिमा, धनतेरस, रूप चौदस, अन्नकूट, भाईदूज, गोपाष्टमी, गुसाईंजीकौ उत्सव, होली आदि के समय भगवान् के सम्मुख कीर्तन करे।

जहां निधिस्वरूप विराजतेहोंय वहां नित्यदर्शनकरें, गायनतेप्रेमकरे। गोदुग्धके सेवनसे शरीरमें स्फूर्ति आवै, आलस्य एवं प्रमाद दूर होय हैं। ब्रजके अधिनायकहमारे श्रीकृष्णहैं, वेई परमकलानिधिहैं आनन्द रूपहैं, जगत्की सभी ललितकलानकों आचार्यनेसेवाप्रणालीमें विनियोगकरकें सभीकलानकों सार्थककरदियैए। रसहीन और शून्य हृदयमें आनन्द नहींआवै जहां आनन्द नांयहोय वहां भगवान्कौ आविर्भावनांहिहोय। यालियें बिबिध उत्सब मनोरथ बालकनके जन्मोत्सव आदिमें प्रभुकी अनौखी छटाकौ आल्हाद आवैए। "गुणगानेसुखावाप्तिः गोविन्दस्यप्रजायते-'

ब्रजभूमि गिरिराजजी यमुनाजी बैठकजी एवं ब्रजकी सकल वस्तुनमें भगवद्भाव रखते भये ब्रजदर्शनके लिये उत्सुक रहे। गोकुल, गोवर्धन, बृन्दावनादि दिव्य लीला भूमिके जीवनमें एकबार अवश्य दर्शनकरे। ब्रजके स्थलनमें अपने आपही भगवान् निजभक्तनकौ बशीकरण करैं हैं।

आचार्यजीने ब्रजभाषा और हिन्दी साहित्यकों जीवनदियौ। भगबत सेवामें साहित्य संगीत ललितकलाऔं उपयोगीकलानकों स्थान देकें उन्हें जीवितरखबेकौ प्रयत्नकियौ। सामाजिक एकतापै बलदियौ कृषि एवं कुटीर उद्योगनकौ उत्थानकियौ, श्रीमद्भागवत के गूढ़ार्थकौ प्रकाशनकियौ, भारतीयभाषा संस्कृतकौ उत्थान कियौ,भगवद् विमुखताही नाशकौ हेतु है, सिद्धकियौ। "कृष्ण सेवा सदाकार्या मानसी सापरामता" (षोडश ग्रन्थ)

भगवान् श्रीकृष्णकी सेवा सदा करनी चहिये सेवामें मानसी सेवा श्रेष्ठ मानीगई है। अग्नि के मुखकी सेवा और ब्राह्मण भोजन एक समान हैं क्योंकि ब्राह्मण मुख स्थानीयहै और प्रभुके मुखते अग्निप्रकटहोयहै वैष्णवन

की सेवा औरहू अच्छी मानीगई है। वैष्णवकी कोऊ जाति-पांति नांयहोयहै। बार्तासाहित्यमें मोहनाभंगीकी कथा आवैहै। मोहनाभंगी वैष्णबहैगये, कंठी, तिलक धारण करते--गुसाईंजीकी प्रसादी बगलबन्दी पहनते, हरसमय अष्टाक्षर महामंत्रको जाप करते रहते। एकदिनकौ प्रसंगहै कि दुपहरके समय श्रीश्रीनाथजी बाबापधारे और मोहनाभंगीकों साक्षात् दर्शनदियौ और आज्ञा करी कि हमकौ कन्धापै धरिकें कदम्वखण्डी तक गोविन्दस्वामीके पासलेचलौ। श्रीनाथजीबाबा गोविन्दस्वामीते सखाभावमानते हंसते-बोलते खेलते। दाल-बाटीके मनोरथमें श्रीनाथजी बाबाकों बिनने न्यौतो दियौ। जब मोहनाके कंधापै चढ़िकें श्रीनाथजी बाबा पहुँचेतो गोविन्द स्वामीने श्रीनाथजीकों चौका में नांहि घुसननदियौ क्योंकि बे मोहनाभंगीके कंधापै चढ़िकें आये। श्रीनाथजी बाबाकों ऐरावतकुंडमें सचैल वस्त्रशृंगारसहित स्नानकरायौ गयौ, श्रीनाथजी बाबाने दालबाटी आरोगी, मोहनानेहू जल्दी प्रसाद लियौ क्योंकि बापिस कंधापै बैठकें श्रीनाथजी बाबाकों लै जानो हो। मोहनाके कंधापै बैठकें श्रीनाथीबाबा आये मन्दिरमें पहुँचे, उत्थापन केसमय जब गुसाईंजी सेबामें पहुँचे तो देख्यौ कि श्रीनाथजीके बस्त्रनमेंतैं पानी टप-टप टपकरह्यौहौं। जब कारण पूछौ तो श्रीनाथजीबाबाने सबगाथा सुनाई। गुसाईंजीनें तुरन्त गोविन्द स्वामी बुलवाये और कही-कि कहा पूर्व पुरुषोत्तम भगवान्कृष्ण मोहनाभंगीके स्पर्शते अपवित्रहै सकेहैं—गोबिन्द स्वामीने कही कि कृपानाथ ब्रह्मतो नाय छुबाय पै आप श्रीकीवांधीगई मेंड़ छुवायगई। रहस्य ये है कि ठाकुरजी स्नेह के भूखे हैं। श्रीवल्लभाचार्यजी न होते तो या प्रकारकी छूआछूत मेटिबे की वात वैष्णवनके द्वारा हाथते ठाकुरजी की क्रीड़ा कौन सिद्ध करातो।

—※—※—

✻ पुष्टिसम्प्रदाय और श्रीयमुना ✻

★ महाकवि सूरकी दृष्टि में ★

पुष्टिसम्प्रदायके प्रवर्तक आचार्य श्रीवल्लभ हैं। पुष्टि शब्दकौ अर्थ पोषण है अर्थात् अनुगृह। भागवतपुराणमें षष्ठस्कन्धमें "पोषणंतदनुग्रहः" कौ बिबेचन है। प्रभुकी कृपा सर्बोपरि है। जामार्गमें भगवान्‌की कृपाई साधनहै सोई पुष्टिमार्ग है। पुष्टिमार्गमें दस सोपान माने गये हैं और यामें गुरुकी महिमा गोविन्दकेई समान मानीजायेहै। बास्तबिकीशुद्धि आत्म समर्पण तेई होयहै। श्रीसूर तो श्रीवल्लभाचार्यजीके चरण कमलन कौई पूरौ भरोसोकरत भये कहें हैं—

भरोसो दृढ इन चरननि केरो।
श्रीवल्लभ नख चन्द्र छटा बिन सब जग मांहि अंधेरौ ॥
साधन नांहि और कोऊ दूजौ जाते होत निबेरौ।
'सूर' कहा कहै दुविध आंधरौ बिना मोल कौ चेरौ ॥

श्रीसूरदासजीकौ सूरसागर निगम कल्पतरू श्रीभागवतजी कौ बड़ौई मधुर और रसपूरित भाषाकौ रूप है। श्री मदाचार्यजीकेई चरननकी ज्योतिते प्रज्ञा चक्षुसूर के हृदयमें लीलाकौ सूर्य प्रविष्ट भयौ हो और मोहान्धकारते मुक्तहैकें बे अलौकिक दृष्टिते सम्पन्न है गये। इतनोई नांहि अपितु सूरदासजीने भगवान्‌की लीलानकौ प्रत्यक्ष दर्शनरूप अनुभव प्राप्तकियोहो। इनकौसूरसागर श्रीमद्भागवतके दशमस्कन्धतेई प्रारम्भभयौ क्योंकि श्रीकृष्ण की लीला दशमस्कन्धमें वर्णितहैं और आचार्यजीने अड़सठ श्लोकनमें पूरी अनुक्रमणिका सूरकौं सुनाई ताते सहस्त्रावधि पद रचना सागर कौ रूप धारण कर गई।

आचार्यवल्लभनें दशमस्कन्धमें निरोध लीला मानी ताहि सूरने गायकें पल्लबित करीए। पुष्टिमार्गमें भागवतजीकौं चतुर्थ प्रमाण मानौगयौए-पहिलो वेद-दूसरो प्रमाण-गीता-तीसरो ब्रह्मसूत्र और चतुर्थ भागवत, श्रीआचार्य-जीने अपने तत्त्वदीप निबन्धमें स्पष्ट लिख्यौ है—

वेदाः श्रीकृष्णवाक्यानि व्याससूत्राणि चैव हि ।
समाधिभाषा व्यासस्य प्रमाणं तच्चतुष्टयम् ॥

श्रीभागवतजीकौं अमृत कह्यौगयोहै और वो अमृत भगवान् श्रीकृष्ण केई चरितमें है । पूरे श्रीकृष्ण चरितमें हृदय तुल्य हृदय रोग हरवेबारी रास लीलाकौ रहस्य स्त्री भावते भावित साधककौं ही बुद्धिगम्य होय है । तभी आचार्यजीकौ—

श्रीमद्भागवत पीयूष समुद्र मथनक्षमः ।
तत्सार भूत रासःस्त्री भाव पूरित विग्रहः ॥

इन शब्दनतैं स्मरणकियो गयौहै । भगवद् विरहानुभवकौं अत्यधिक महत्त्व देबे बारे महात्मा सूरदासने गोपीभाब-कान्ताभाब और राधाभाब सौं भाबित हैकैं भ्रमर गीत प्रसंग पै बहुतसे पद रचे हैं । भक्त सूरदास निखिल ब्रह्माण्ड नायकके कृपा प्रसादके इच्छुक हैं—

"सूरदास प्रभु आप कृपा बिनु को मो दुख बिसरावै"

भगवान पै बिनकौ पूरौ भरोसौहै बे कहै हैं:—

हरि जू तुमते कहा न होई ।
रंक सुदामा कियौ इन्द्र सम पाँडव हित कौरव दल खोई ॥
पतित अजामिल दासी कुबिजा तिनहूं के कलिमल सब धोई ।
बोलै गूंग पंगु गिरि लंघै अरु आवैं अंधौ जग जोई ॥
× × × ×
सूरदास प्रभु इच्छा पूरन श्रीगुपाल सुमिरौ सब कोई ।

प्रभु की कृपा तैं सब काम पूरे हौयैं:—

अति प्रचंड पौरुष बल पायें के हरि भूख मरै ।
बिन आसा बिन उद्यम कीनें अजगर उदर भरै ॥
× × × ×
राजारंक रंक तैं राजा लै सिर छत्रधरै ।
सूर पतित तरिजाइ तनकमें जो प्रभु नेंकु ढरै ॥

सूरदासजीने अपने कीर्तन पदनमें सम्प्रदायके भाव बड़ी चतुराईते भर दिये हैं, भगवान् की रूप माधुरीकौ जैसौ बरनन इननै कियौए जैसौ वात्स-

ल्यको कौनो कौनों छान्यौए काऊ दूसरे कविने नांहि । और याई प्रकारते इन ने श्रीजमुनाजीकी महिमाकौ गान कियोए । श्रीवल्लभाचार्यजीकौ प्रथम ग्रन्थ श्रीयमुना महारानी कौई अष्टक है—जाकौ पहलौ श्लोक ये है:—

नमामि यमुनामहं सकल सिद्धि हेतुं मुदा
मुरारि पद पंकज स्फुरदमन्द रेणूत्कटाम् ।
तटस्थ नव कानन प्रकट मोद पुष्पाम्वुना
सुरासुर सुपूजित स्मर पितुः श्रियंबिभ्रतीम् ।।

श्रीसूरदासजीने तो श्रीयमुनाजी कौई श्रेय दियौ और कह्यौ कि मोयतो श्रीयमुनाजीने पतितनमें पावन कर्यौए । श्रीयमुनाजी बिनकी दृष्टिमें भगबान् श्रीकृष्णकी पटरानीऐ सब सिद्धिनकौ दैबेमें समर्थ हैं । एक पलक मथुरामें रहे ते कोटिजन्म के पाप कटैंहैं बिना भाग श्रीयमुनाजीकौ महाप्रसाद मिल नहीं सकै है:—

मथुरा एक पलक जो रहिये ।
कोटि जन्म के पाप कटैं श्रीकृष्ण नाम मुख कहिये ।।
महा प्रसाद औ जल यमुना कौ भूख लगै तब खइये ।
सूरदास बैकुण्ठ मधुपुरी बिना भाग क्यौं एइये ।।

जमुनाजलकी क्रीडा औ जमुनातटकी क्रीडातौ अनेक पदन में वर्णित करीऐ जैसे:—

जमुना चली राधिकाभोरी ।
जमुना जलहिं गईं जे नारी ।।
जमुना तट देखैं नंद नन्दन ।
जमुना जल बिहरति नंदरानी ।।

पैं वे तो माने है कि सभी व्रज जमुना के तट पैंईए वे कहै है सबै व्रज है जमुनाके तीर" पैं बिनकी भावना पुष्टि सम्प्रदाय की है जाते वे तो श्री यमुनाजी को दरसन करनौ चाहैं है ।

"श्रीजमुना निज दरसन दीजैं" ये दरसन जलरूप भौतिक दरसनते न्यारौईए क्योंकि एक पदमें बे कृष्ण की प्यारी याहि मानैं है:—

कालिन्दी है हरि की प्यारी ।

और कहैं कि मोहि तैंने खूब रिझायौऐ मोय तो सब कछु मिलगयौऐ–

जमुना तैं हौं बहुत रिझायौ ।

अपनी सौंह दिये नंद दुहाई ऐसौ सुख मैं कबहुँ न पायौ ।।

× × × ×

भयौ प्रसन्न प्रेम हित तेरे कलिमल हरे जु ईहि जलन्हायौ

अब जिय सकुच कछू मति राखहि माँगि सूर अपनौ मन भायौ ।।

मथुरामें बहिबेवारी श्रीजमुनाकों दरसन बड़ेई पुण्यनते मिलै है आचार्यजीनेऊ लिख्यौए—"विशुद्ध मथुरा तटे" । श्रीसूर लिखैं हैं:–

श्री यमुना जी तिहारौ दरस मोहि भावै ।

श्री मथुराजी के निकट बहति हौ लहरनि की छवि आवै ।।

दु:खहरनी सुखकरनी श्रीजमुनाजी जो जन प्रात नहावै ।

मदनमोहनजूकी खरी पियारी पटरानी जु कहावै ।।

वृन्दावनमें रास रच्यौहै मोहन मुरली बजावै ।

सूरदास प्रभु तिहारे मिलन कौ वेद विमल जसगावै ।।

श्रीयमुनाजीको तौ पुलिनहू बड़ो सुखदाई मान्योहै । श्रीसूर छटपटावें कि कहूं या भूमिके कुंजनते यमुनाके पुलिननते दूर न चलोजाऊं, सदा मैं तो यहीं रहूं—

श्री यमुना जो तिहारे पुलिन मोहि भावैं ।

सुर ब्रह्मादिक ध्यान धरत हैं सो सपुने नहीं पावें ।।

× × × ×

कुसुमन के वीजना सम्हारें सखियां बांह ढुरावै ।

सूरदास प्रभु सब सुखसागर दिन दिन सो भरमावै ।।

सूर कहैंहै कि श्रीजमुनाजी जमराजकी बहिन हैं, जगतकीमाँ है जस को राशि हैं—

जमुना जस की रासि चहूँ जुग जेठी जग की महितारी

सूर कछू जिय नहीं दुख पावै कृपा करौ यही टेव तिहारी ।

जमुनाजी में कृष्ण हेलुआ खेलैंऐं नाम जलै उछारिबे की क्रीडा करै हैं ताते जमुनाजीकौं बहिबौ अच्छौ नाँहि लगः—

जमुना तोहि बहिवौ क्यों भावै ।
तो मैं कृष्ण हेलुआ खेलै सो सुरता नहीं आवै ।।

× × × ×

हरि वियोग कोऊ पांव न देवै को तट बेनु वजावै ।

× × × ×

सूरदास कौ ऐसौ ठाकुर कमल फूल भरि लावै ।।

श्रीयमुनाजी कृष्ण स्वरूपिणी हैं ताते सूर तो ये मानै हैं—

मोर मुकुट पीताम्बर मुरली वनमाल वैजन्ती नामो ।
सब गोपिन की रसाधीश्वरी तुमरे भेष बनौं प्रियगामी ।।
जो तुम सो मैं जो मैं सो तुम रंचक भेद रहै नहिं स्वामी ।
सूर जीव उद्धारन कारन रहो कृपा द्रवित मधुधामी ।।

सूरकी भावनाए कि श्रीयमुनाजी सब जीवनकौ उद्धार करैंहैं वे श्री कृष्णकी पटरानी हैं, वे सिद्धिदायिनी हैं और जमराज के भय कों दूर करबे बारी हैं, रसस्वरूपिणी हैं। या प्रकार भगवान्की सेवा में और श्रीयमुनाजी की महिमामें भक्तवर सूरदासजी सदाई रमे भये रहै है, ये बिनके पदनते स्पष्ट है। पुष्टिमार्ग में तौ भगवान्ही फलरूप हैं प्रभुकौं ही फलरूप मानकैं त्रिनकी सेवा करनौं वैष्णवन कौ कर्त्तव्य मानौजायौए। या मार्गमें भक्त भगवान्के सुखके लिये ही सब कामकरै हैं। वो भगवान् के सिवाय मोक्षकौं हू नाँहि चाहैं। यालियें मनुष्य जन्म सफल बनायवेके लिये श्रीकृष्णचन्द्रकी सेवा अर्हनिश करनी चहियेः—

"सूरदास स्वामी करुनामय बार बार बंदौ तेहि पांही"

क्योंकि वे कहै हैंः—

मेरौ मन अनत कहां सुखपावै ।
जैसे उड़ि जहाज कौ पंछी फिरि जहाजपै आवै ।
सूरदास प्रभु कामधेनु तजि छेरीं कौन दुहावै ।।

* व्रजरास कौ स्वरूपः पुष्टिमार्गीय ग्रन्थन में *

प्रस्थन चतुष्टयीमें श्रीमद्भागवत पुराणकों सर्वोच्च स्थान देबैके कारन वल्लभसम्प्रदायमें या पुष्टिमार्गमें लीलातत्त्वको सर्वाधिक महत्त्व है। "रसानां समूहो रासः" अर्थात् रसके समूहकों रासकहैं, या मान्यताके अनुसार गहन-भाव दशामें प्रियके अनुकरणकी जो प्रेरणा मिलैहै बाईते रासकी उत्पत्तिहोय ऐसो श्रीवल्लभाचार्यजीकौ मतहै। रासकौ मूल विप्रलम्भमें औंर विकास संयोग में मान्यौए। गोपिनने अनुकरण-अनुकथन औंर भावानुभूतिते 'कृष्णगृहीतमानसाः, हैकें आनन्दकी अनुभूतिकरीही। "योगीवानन्दसम्प्लुता" भागवत पदतें जानौ गयौए कि ब्रजांगनानके आनन्दको स्वरूप बोईए जो एक योगीकों ब्रह्मानुभूतिमें होयैहै। तात्पर्ययेए कि रासकौ लक्ष्य ब्रह्मानन्द है, विषयानन्द नांहि। याईते आचार्य श्रीवल्लभने श्रीभागवतकौ चरमतात्पर्य रासलीला कोंही मान्यौ है। बिनके आशयकों समझकें गोसाईं श्रीविट्ठलनाथजी ने अपने सर्वोत्तमस्तोत्र ग्रन्थमें स्पष्ट लिख्यौहै कि—आचार्यश्रीवल्लभ श्रीभागवतरूप अमृत सागरके मंथनकर्ताहैं और बा भागवतके सारभूत रासतत्त्वके लिये वे स्त्री भावते पूरित विग्रह बारैं हैंः—

श्री भागवतपीयूष समुद्र मथन क्षमः
तत् सारभूत रासस्त्री भावपूरित विग्रहः। (सर्वो० १६)

इतनौई नांय स्वयं आचार्यजीके जीवनकौ लक्ष्यही भगवान्की रास लीलाकौ समझनौए। बाईते बिनने कृपालुहैकें साँसारिक जीवनकौं रासलीला की कथा प्रदान करीए। श्रीसर्वोत्तम स्तोत्रमें लिख्यौ है—

"रासलीलैकतात्पर्यः कृपयैतत् कथाप्रदः।" (सर्वो० १७)

आचार्यवल्लभ जैसे वीतराग और भक्तिके आचार्यके जीवनकौ लक्ष्य रासलीला प्रसंगके तात्पर्यकौ अध्ययन करनौहौ ये तथ्य स्वयं एक गम्भीर विचारचाहैं।

श्रीवल्लभाचार्यजीने स्वयंने व्रजमें श्रीरासलीलाके अनुकरणमें सहयोग दियौ है राससर्वस्वमें लिखौहै कि—एकबार श्रीवल्लभाचार्यजीने मथुरा के विश्रामघाट पै स्वामी श्रीहरिदासजी की सन्निधि में रासलीलाके प्रकटीकरण

कौ विचार कियौ । मथुराके चतुर्वेदीन के ८ बालकनकौं छांटकें स्वरूप बनायौ गयौ । रसिक शिरोमणि रसिक सम्राट् स्वामीश्रीहरिदासजी ने तौ कियौ श्री किशोरीजीको शृंगार ओर आचार्यवल्लभनेकर्यो श्रीश्यामसुन्दरको शृंगार । मिहारीउद्धवजीने पूरौ पूरौ सहयोग कियौ और पैलौरास यमुनातट पै भयौ । रास में जबअन्तर्धान लीलाकौ प्रसंग आयौ तब ठाकुरजी कौ और श्रीकिशोरी जी कौ स्वरूप श्रीयमुना में तिरोहितहै गयौ । चारौं तरफ हाहाकार भयौ यमुनाजी में ढूंढे पै न मिले । जिनके बालकहै वे सब रोमनलगे और स्वजन सम्बन्धी इकठ्ठे है गये । बिनने आचार्य जी ते अपने बालकमांगे आचार्यजी ने स्वामीजी ते कही बिनने श्रीयमुनाजी में क्रीडा करते भये दिखाय दीनें तब चतुर्वेदी शान्त है गये । वा ग्रन्थ में लिखौ है—:

प्रथम रास विश्रान्त किय बहु व्रज भक्त बुलाय ।
उद्धव श्रीहरिदास तहाँ प्रकट रचेउ सुहाइ ।।
उद्धव रस के पारखी गान किये नव रास ।
वल्लभ नेह छकित भये उमग्यौ अति अनुराग ।।
माथुर लीला विरत भे तब घमंडि समुझाय ।
तुम यह परिपाटी गहौ हरि भक्तन हित छाय ।।

विश्रामघाट पै जो मुकुटकौ दरसन है सम्भव है ये आचार्यजी कौ ही धरायौ गयौ होय । मण्डलही पैलें रास मण्डल होयगो । व्रजके बाहर हू या लीलाकौ लेजायवेकौ श्रेय वल्लभ संप्रदाय कौं है । श्रीगोविन्दलालजी महाराज एकवार व्रजयात्रा करिबैपधारे । करहलामें बिनने रासलीला देखी, वे बड़े प्रभावित है गये और श्रीनाथजी कौ सोने को प्रसादी मुकुट दियौ । प्रतिवर्ष रास लीला कौ उपदेशहू दियौ । भादोंकी पूनों कौं आजहू क्रम चलै है । एकबार इन्ही गोस्वामी जीने श्रीनाथ द्वारा में मन्दिरमें रासलीलाकौ आयोजन करौ । जीवानन्द शिष्यहोसो गुरुकी आज्ञाते व्रजकी सीमा लांघि कैं रासलीला करिवे गयै तभी ते ये लीला व्रजते बाहर हू प्रचलित है गई । पैलें निम्बार्क और वल्लभ के मतवारेन नेई याकौ अनुकरण प्रारम्भ कियो हो ।

श्रीवल्लभाचार्यजी ने सुबोधिनी टीकामें रासप्रकरणमें रासके द्वारा काम के शमन और अलौकिक कामकी पूर्ति कौ निर्देशतो दियौहै पै रासलीला के अनुकरण कौ संकेतनहीं दियो है । श्रीसूरदासजी श्रीनन्ददासजी आदि अष्ट

छापके कविन नेहू रासलीलाके माहात्म्य कौ गान कियौहै, लीलान कौ चित्राँ-कनहू कियौहै । श्रीगायत्रीभाष्यमें लिखौ है कि रास, सकल इन्द्रियनकौं स्व-रूप सम्बन्ध ते आनन्द देबैबारौहै । रस तौ रासलीलातेई मिलै है—

'अतएव रास एव सर्वेन्द्रियास्वाद्यः साक्षात् स्वरूप सम्बधः मनोरथान्त रूप—': (गा० भा०) कथं रासलीला तात्पर्यमिति चेत् तत्राह—भक्तिमार्गीयसन्या-सस्तु साक्षात् पुष्टि पुष्टि श्रुतिरूपाणां रास मण्डलमण्डनानां" लिख्यौ है रासमें भगवान् गोपिन के गलेमें हाथ डालैंहै बिनके संग अंग स्पर्श करें पै बो काम विषय नांहि है—"क्रिया सर्वापि सैवात्र परं कामो न विद्यते" अर्थात् गोपिनके लौकिक कामकौ शमन और अलौकिक कामकी पूर्ति निष्काम भगवानके द्वारा ही भईही । सुबोधिनीजी में लिख्यौ है--"काकोन पूरितः कामः निष्कामः संसारं जनयत् स्फुटम् ।। लीलामें सम्मिलित हैबे बारी गोपी देहके अभिमानते मुक्त हीं "कृष्णोऽहम्" मैं ही कृष्णहूं या स्थितिमें डूब गई हीं । भक्तिमार्गीय सन्यास की यह अन्तिम भूमिका रसात्मक भक्तितेई सम्भव है जो रासलीलाते सहज सम्भव होय है । रासपंचाध्यायीके पहले अध्यायके 'बाहुप्रसार' श्लोक ते संयोग है, दूसरेमें तिरोधान लीलाते एकात्मकताकौं संकेत है । तीसरे में उभय की स्फूर्ति, चतुर्थ में "तासामाविरभूत्" श्लोक ते सोऽहम् के द्वारा अभिन्नता और पंचममें संयोग रसकी चरम सीमा है ।

आचार्य ३ रास मानेंहैं—

१—**नित्यरास**—ये तो निजधाम में होतो ही रहे ।

२—**नैमित्तिकरास**—ये रास भक्तनके निमित्त होय है ।

३—**अनुकरणात्मकरास**—ये दैवी जीवन के उद्धार केलिये होय है । ठीक ही है । श्रीसूरदासजी श्रीराधाकृष्ण की मिलन लीलाकौं बड़ेई चावते गावैंहैं-

राधाजी विचार करैं हैं कि गोपी मेरे पीछे पड़ी हैं तो बिनते बंचवे कौ उपाय सोचैं है—

राधा मन में यहै विचारति ।

ये सब मेरे ख्याल परी है अब ही बातनि लै निरबारति ।।

राधा हरिके गर्व तें गर्वीली बनी हैं, सूर लिखैं--:

राधा हरि कैं गर्व गहीली ।

पग द्वै चलति ठठकि रहै ठाढी मौनधरै हरिकैं रसगीली ।।

सूरकी राधा, श्याम छविकी साध लिये हैं, वे अपने कौं तो नन्दलाल और श्यामसुन्दरकौं वृषभानु नन्दिनीके रूप में देखनौ चाहें हैं। या लिये वे कमर में काछनीकाछैं, बनमाला पहरैं और हाप्रिया हाप्रिया कहिकैं बा प्रेम वैचित्री कौ रसास्वादन करैं हैं—

वृन्दावन हरि यहि विधि क्रीडत सदा राधिका संग।
भोर निसा कबहूं नहि जानत, सदा रहत इक रंग।।

श्रीकृष्ण राधा ते पूछैं कि और चीज तो प्यारी जू पहिन लेउँगौ पै कंचुकिके फल नाम 'स्तन' कैसेंलगेंगे—

प्यारी जू मैं कैसै कि मान रचाऊँ।

कैसैकि ओढि लऊँ सिर चूंदरी, कैसैकि कटि लचकाऊँ।
सूर स्याम यह भेष धरूँ तौ कंचुकि फल कहां पांउ।।

रासकी अनुरागलीला, मुंदरीचोरीलीला आदिमें श्रीकृष्णदासजी के पद गाये जायै हैं:—

गान करत व्रज की बाम सप्त सुरन तीन ग्राम,
अंग अग अभिराम मन्मथ मन लाजैरी।।

जुवतीजन नृत्य करैं स्याम ग्रीव भुजा धरैं।
स्याम संगीत उघरि रस ही साजैरी।।

'कृष्णदास' प्रभु विलास बरखत नव रूप रास।
वृन्दावन वर विलास रंग बढ्यौ आजैरी।।

श्रीपरमानन्ददास जीकी रास मंचकी उद्धवलीला, चन्द्रावली लीला तो प्रेम ते भरी ही हैं।

न गहौ कान्ह कोमल मेरी बहियां।

होत अबार बार मोहि लागं छांड़ हु कौन टेब तुम पहियां।
परमानन्द प्रभु कहि निबरों कछु बैठहु नैक कदमको छहियाँ।।

इनके पद "धनि ये राधिकाके चरन" कौ प्रचलन तौ आज हू रासमें होय है।

श्रीगोविन्ददासजीकी मानलीला–दानलीला के पदन कों रास मंच में प्रयोगमें लावैंहैं—"कुंजके द्वार ठाड़े हैं मोहन, देखत हैं मग तेरौरी प्यारों"। रासपै लिखैं हैं—

गिड़ गिड़ थुंग थुंग तिट किट थुंग ।

एक चरन करसौं भलैं मृदंग बजावै ।।

दूसरे कर चरन सौं कठताल झां झां झां ।

झपताल में अवधर गति उपजावैं ।।

श्रीछीतस्वामीजीके रासपद संगीत की दृष्टिते विशेष अवलोकनीय हैं "छीतस्वामी सबकौ चित्त चोरत मन्द मुसकि जब जो हैं" चतुर्भुजदासजी— श्रीराधाजीके विरह में लिखैं हैं कि—

बात हिलग की कासौं कहिये ।

सुनरी सखी विवस्था तन की समुझि मनहिं मन चुप करि रहिये ।।

मरमी बिना मरम कौ जानै इहि उपहास जानि जिय सहिये ।

चत्रभुज प्रभु गिरिधरन मिलै जब तब ही सब सुखसम्पति लहियै ।।

गो० श्रीहरिरायजीकी गणना वल्लभ सम्प्रदायके श्रेष्ठ आचार्यनमें हैं इनकी रचना निकुंजलीलामें गाई जायैं । रासमें गोपी लीला, बंशीचोरी, परस्पर मान लीला, सांबली सहेली, लीलान में इनके पद बड़े ही युक्त बैठें हैं— श्रीराधाजी कौ उद्गार इन्हीं के शब्दन में सुनौ—

कोई मोहि मोहन लाल मिलावै ।

ज्यों चकोर कौ इकटक भृंगो ध्यान लगावै ।।

हा हा करि करि पायन परि परि हरि हरि टेर सुनावै ।

रसिक प्रीतम मोहि आन मिलावौ और नहीं जियभावै ।।

हरिरायजीके प्रीतम श्रीराधाजीकौ मन जोवैं—

प्यारी झूलन पधारौ झुकि आये बदरा

साजौ सकल श्रृंगार नैन धारौ कजरा ।

रसिक प्रीतम मग जोवत खड़े

दोऊ कर जोरे तेरे चरनन पड़े ।।

यद्यपि श्रीपुष्टिसम्प्रदाय में बालकृष्ण भगवान् उपास्य हैं तोऊ रासलीला की दृष्टि में या सम्प्रदायकौ बड़ो योगदान है ।

—: सूर सागर औ भागवत :—

सूरसागर भागवतकौ अनुवादहै ऐसो कोऊ मानेहै पै बात ये ए कि सूरदासकी मौलिक प्रतिभा बड़ीई तीखीही।

डॉ० धीरेन्द्रजी ने ये लिख्यो है कि "सूरसागरके लोकप्रिय न हो सकनेका कारण यह भी रहा है। इसे भागवत का रूपन्तर माना जाता रहा और इस रूपमें ग्रन्थ अत्यन्त शिथिल और असंबद्ध दिखलाई पड़ता है। सूरसागरका कृष्णलीला सम्बन्धी रूप जो वास्तविक सूरसागरहै द्वादश स्कन्ध रूपरेखामें छिप जाता है"। आचार्य नन्ददुलारे वाजपेयी ने लिख्यौ है कि मुख्य उद्देश्य श्रीकृष्णलीलाकौ केवल गानमात्र हो, द्वादश स्कन्धकौ अनुवाद करनौ नहीं हो। श्रीहजारीप्रसाद द्विवेदी ने हू सूर कोंसोलह आना भागवतकौ अनुयायी नांहि मान्यौ। प्रो० दामोदरदास गुप्तने अन्त: साक्ष्यकी ओर ध्यान दिवायो है। भागवत की गोपी तो उद्धवजी को उपदेश मानें हैं, प्रेमकी अपेक्षा वे ज्ञान की विजय स्वीकार करैं हैं। सूरदासकी गोपी तो ज्ञान की धज्जी उड़ायदेंय हैं।

याके अतिरिक्त अनेक बातें हैं जिनते सूरकौ लक्ष्य अनुवाद करनो सिद्ध नाँहि होय है। जैसें प्रथम स्कन्धमें, सूत शौनक संवाद, परीक्षित जन्मकथा, भीष्मस्तुति आदि समान हैं, स्वयं सूरदासहू कहैं हैं—

श्रीमुख चरि स्लोक दए ब्रह्मा कौं समुझाइ।
ब्रह्मा नारद सौं कहे नारद व्यास सुनाइ॥
व्यास कहे सुकदेव सों द्वादस स्कन्ध बनाई।
सूरदास सोई कहे पद भाषा करि गाई॥

सूरके शब्दनते ऐसो मालूम होयहै कि वे तो व्यासकृत भागवतकौं पद बनायकैं गाय रहे हैं। यदि यही बात है तो ऊपर जिन विद्वाननके मत हैं सब असत्यसिद्ध स्वत: ही होजायैं हैं, इन विद्वाननने अभी तक सूरकी प्राप्त सामग्रीकौ निश्चय असन्दिग्ध सिद्ध नांहि मान्यो है, कछु पद तौ आजहू हैं।

कहूँ-कहूँ तो श्लोकनको भावहू ज्यों कौ त्यों सूरके पदनमें मिल जाय है जैसे–कुन्तीने भागवतमें १ श्लोक में ये भगवान् सों प्रार्थना करी है कि हे प्रभु ! मोकों पाँय-पाँय पै दुःख मिलें, जाते आपको दरसन बार-बार मोकों होय। वो श्लोक ये हैं:—"विपदः सन्तु नः शश्वत्तत्र तत्र जगद्‌गुरो" ।

सूर लिखैहैं:—"प्रभुजू बिपदा भली बिचारी" ।

ये कुंती स्तुति प्रकरन में ही लिखी गयी पंक्ति है। याते निश्चय होये ए कि कहूं कहूं सूर भागवत के स्लोकन कौ अनुवाद हू करैं हैं।

पै सांची बात येईए जो अन्य विद्वानन ने लिखी है कि सांचौ अनुवाद नांहिनें कहूं भावार्थ लियोए कहूं कथा छोड़ दीनी है।

प्रथम स्कन्ध में—ही शुकदेवजी अमर कथा सूर सागर में मानै हैं। एक कन्दरा में तोता बैठो हो महादेव पार्वती ने राम महिमा गाई, तोता ब्यासजी की पत्नी के गर्भ में जाय पहुंच्यो" पै भागवत में ये नांहिहै—

दूसरे स्कन्ध में—दोनों ग्रन्थन में २४ अवतारन को बरनन तौ मिलै है और सब बरनन नांहि मिलैं हैं, जबकि १० अध्यायन में भागवत में अनेक कथानक हैं।

तीसरे स्कन्ध में—भागवत में अनेक कथाऐं हैं, सूर सागर में देवहूति आदि की कथा बड़े संक्षेपसौं हैं।

चौथे स्कन्ध में–भागवत के ध्रुव, पृथु, सती, पुरंजन चरित नांहि हैं औ सूरसागर में बंशबरनन हैईनांय।

पाँचवें स्कन्ध में—सूर सागर में केवल ऋषभदेव, जडभरत को बरनन है पै भागवत में भूगोल-खगोल और नरकन की कथाऐं हैं, जाकौ नामहू सूर ने नांहि लियोए।

छठे स्कन्ध में—भागवत की अजामिल और वृत्रासुर की कथाऐं हैं, सूर सागर में मरुतन की कथा नाँहि है।

सातवें स्कन्ध में—पैहलाद की कथा तो है, पै बरनन की और आश्रमन की कथा नांहि नें।

आठवें स्कन्ध में—गजेन्द्र मोक्ष, अमृत मंथन, बलिबंधन और मत्स्याबतार की कथा है पै सृष्टि क्रम यामें वर्णित नाहिं है।

नवम स्कन्ध में—भागवत में इक्ष्वाकुनृग आदि राजान की कथा प्रारंभ है या में पुरूरवा की कथा ते स्कन्ध कौ आरंभ है—:

सुकदेव कह्यौ सुनौ हो राम। नारी नागिनि एक सुभाय।
नागिनि के काटैं बिष होइ। नारी चितवत नर रहै भोइ॥
नारी सों नर प्रीति लगावै। पै नारी तिहिं मन नहिं ल्यावै।
नारी संग प्रीति जो करै। नारी ताहि तुरत पार हरै।
नरपति एक पुरूरवा भयो। नारी संग हेत तब ठयो॥

ये कथा भागवत मेंऊ आईए। एक पुरूरवा नाम कौ राजाओ। बाकौ प्रेम उर्वसी नामकी अप्सरा तैं है गयौ हो। अप्सरा कछु दिन के बाद वाकौं छोड़ कें चली गई। पुरूरवा राजा वाकैं पीछैं मारौ-मारौ फिरौ हो। सूरदास ने हू वाको तत्त्व अपने शब्दनमें गायो है। अंबरीस, सौभरी मुनि, गंगा अवतरन, परशुरामकी कथा तो संक्षेपमें हैं पै रामचरित तो रामायण के काण्डन की पद्धति पै लिख्यो भयोए। हरएक कांडकी संक्षिप्त कथा सूरसागरमें है।

दशम स्कन्ध—सबसें बड़ौहै। भागवत में हूँ ९० अध्यायन में है। काऊ-काऊने १०४ अध्यायहू यामें माने हैं। सूर या कृष्णलीला गानमें खिल उठे हैं। भागवतानुसारी कथा होते भयेऊ वे अपनी स्वेच्छाते वरनन करैं हैं—श्रीराधा की महिमाको गान उनको गान्धर्व विवाह हू करामेंहैं जबकि भागवतमें तो स्पष्ट राधाको नामहू नांहि है, संकेत में ही है। सूर तो राधा-कृष्ण मिलाप कराते लिखैं हैं:—

औचक ही तँह देखो राधा, नैन बिसाल भाल दियें रोरो।
नील वसन फरिया कटि पहिरैं, वेनी पीठ झलति झक झोरी॥

श्रीकृष्ण, राधिकाकी आंखिनकौं मीचेंहैं पै राधाकी बड़ी-बड़ी आंखें उनकी नैंहनी अंगुरीनमें समावैं नांहि हैं:—

ठाड़ी कुंअरि राधिका लोचन मीचत तँह हरि आये

अति विसाल चंचल अनियारे हरि हाथनि न समाये ।

वे राधाकी गैया काढे हैं:—

दुहि दीन्ही राधा की गाई ।

दोहनि नहीं देत करतैं हरि हा हा करि परैं पाइ

ज्यों ज्यों प्यारी हा हा बोलति त्यौं त्यौं हंसत कन्हाई ।

सूर अपनी ओरसों लिखैं हैं कि भगवान् श्रीकृष्णकौ रास समै में गान्धर्व विवाह भयो हो:—

जाकौं व्यास बरनत रास ।

है गंधर्व विवाह चित्त दै सुनौ विविध विलास

दोनों चंदन के रथपै बैठकें आमैं हैं:—

चन्दन के स्यन्दन बैठे हरि, संग श्री राधा गोरी ।

अति आनन्द निरखि जुवती जन, डारत हैं तृन तोरी ॥

ग्यारहमों स्कन्ध तो केवल १ ही पृष्ठमें है। कलियुग को वरननहू है। वारहवेंस्कन्धमें बुद्धावतार और कल्कि अवतार की कथा है। भागवतमें मुख्यवर्णित राजापरीक्षित कीहू मोक्षकी कथा सूरसागरमें नांहि है। न बारह सूर्यन की और न पुराणनके परिमाणकी कथानको बरनन। याते सूरसागर भागवतको अनुवाद मात्र नहीं है।

※ कंसे मार मधुपुरी आये ※

:: रूपक ::

द्वापर कौ अन्त हौ, राजा कंस ततकालीन क्रूर शासकन की क्रूरता में मथुरा में बैठौ लजाय रह्यौ हौ, अपनी छोटी बहन के छः बालकन की हत्या करकेंऊ जाकौ मन संतुष्ट न भयौ, दुर्दान्त शासक सहसा काऊ के द्वारा नांय मारौ जाय सकतौ हो, याही लियें स्वयं भगवान् श्रीकृष्ण ही बाकूं मारिबे कूं अवतरित भये और उननें अपनी जन्मभूमि में वाके शासन कौ अन्त कियौ। वा घटना की स्मृति मथुरा में आजहू अक्षुण्ण बनी भई है। हर वर्ष कार्तिक महीना में शुक्लपक्ष की दशमी कूं यह उत्सव कंसटीला पै ते शुरू हैकें यै विश्रामघाटपै खतम होय है। हजारन की संख्या में मथुरा के चतुर्वेदी ब्राह्मण हाथ में सुन्दर से लट्ठ लैकें अनेक प्राचीन बेसभूसा तथा राजा महाराजान के द्वारा भेंटमें दीनीभई पोसाक पहरकें या उत्सव की सोभा कूं तो बढ़ावें ही हैं साथ ही साथ श्रीकृष्ण के सखाभाव की घटना कौऊ अचानक स्मरण कराय देंय हैं।

उत्सव के दिन कृष्ण-बलराम की सवारी नगर के बीच के भाग ते प्रारम्भ होय है। हाथी पै विराजमान कृष्ण-बलराम की छबिए देखबेकूं सारौ नगर उमड़ परै है। सजे भये हाथी पै बैठे दोऊ भइयानके द्वारा वृक्षकी डालीए हिलायकें संकेत देते ही कंसके विशालकाय कागज के पुतलायँ लट्ठनके प्रहार ते माथुरमल्ल ध्वस्त करदेय हैं। सवारी के आगें २ गाते-बजाते और ब्रज के लोकनृत्य की झाँकी दिखाते भये रात्रि कूं विश्रामघाट पै या उत्सवए सम्पन्न करैं हैं।

(दृश्य–कंस कौ दरबार)

कंस--सभासदौ ! मैंने कृष्ण और बलराम कूं मारिबे के सब उपाय कर लिये। मेरे समस्त सहायक दोनोंन ने मार दिये। ऐसौ लगै है कि वे दोनों मेरे काल ही हैं। अब ये कैसें मारे जांय ?

(सिर पर हाथ रखकर बैठ जाता है)

(नारदजी का प्रवेश)

नारद—नारायण, नारायण, नारायण।

कंस--देवर्षि ! प्रणाम ! डंडौत, पधारौ।

नारद—महाराज ! कुशल तो है न ?

कंस—मुनिराज ! कुशल काहे की है, मैंने इन दोनों कृष्ण-बलराम कौं मारवे के समस्त उपाय अपनाय लिये पर वे तो मारे ही नांय जांय। आप ही कोऊ उपाय बताऔ।

नारद—अरे राजा कंस ! बस इतनो सी वात। यामें कहा है, अरे तुम भगवान् शिवजी की पूजा के लिये १ करोड़ नीलकमल मंगवाओं ! नीलकमल कहीं और मिलै ही नहीं हैं बस केवल यमुनाजी में हैं और जमुनाजी में आजकल तुम्हें पतौ ही है कालीय नाग अपने परिवार सहित रहै है। वामें घुसवौ तौ दूर देखिवे मात्र ते जीव मर जाँय हैं। जब कोई नांय लाइ पाबैगौ तौ कृष्ण-नीलकमल लैवे जाइगौ, और वहीं ढेर है जाइगौ। ठीक है न।

कंस—मुनिराज ! आपकौ उपाय तो बहुत अच्छौ है।

नारद--अच्छौ, तौ मैं तौ चलौ, नारायण, नारायण, नारायण।

कंस—मन्त्रियौ ! जाऔ और नन्दबाबा सों कहौ कि वे १ करोड़ नीलकमल लैकें आवें, नहीं तौ उनके दौनों पुत्र मार दिये जाँयेगे। और हां, यह भी देखियौ कि कोऊ ब्राह्मण कहूँ पूजा-पाठ न कर रह्यौ होय।

मन्त्री—जो आज्ञा महाराज।

(निकल जाते है)

(दृश्य—नन्दबाबा की चौपाल)

(नन्द, उपनन्द तथा अन्य गोप चिन्तातुर बैठे हैं)

नन्द–हाय, हाय यह राजा कंस तौ हमारे हाथ धौय कें पीछै पड़ गयौ है, इतने सारे नीलकमल कैसें आवेंगे। कहा--कहूँ कैसे करूँ, मैं अपने लाला कू लैकें कहाँ चलौ जाऊँ ? जा वुढ़ापे में मैंने याकौ मौह देख्यौ है, ताऊपै ऐसे २ अत्याचार देखिबे कूं मिल रहे हैं।

उपनन्द –हां, भैया ! इन कष्टन सौं बचिवे कू तौ हमने गोकुल छोड़ दियौ, और यहाँऊ राजा कंस हमारौ पीछौ नहीं छोड़ रह्यौ है।

अन्यगोप—या दुष्ट ने कहा-कहा नहीं कियौ हमारे लालाकूं मारिबेकूं, कितनेई राक्षस भेजे। पर बौतौ देवता ही रच्छा कर रहे हैं। नहीं तौ कहाँ हमारौ छोटौ सौ कन्हैया और कहां बो क्रूर राक्षस ! ताऊ पै जा राजा की छाती सीरी नांय भई है।

नन्द—(लम्बी स्वांस खींचकैं) भैय्याऔ ! जमुनाजी में कालीयनाग रहै है, यामें परछाई मात्र परिबे ते मृत्यु है जाय है फिर जामें ते नीलकमल कैसेंआमेंगे (रो पड़ते हैं)

(कन्हैया का प्रवेश)

कन्हैया—बाबा ओ बाबा ! अरे बाबा तुम रोय काएकूं रहेहौ।

नन्दराय—नांय तौ लाला कछ्र नाँयए। कन्हैया तू कहाँ चलौ जायै है, तू कहूँ मत जायौ कर, कन्हैया देख ! कंस के राक्षस घूमौ करैं हैं, तू यहीं पै खेल्यौ कर।

कन्हैया—बाबा मोय सब पतौए। बा दुष्ट राजा कंस ने नीलकमल मंगायेएं न। तौ बाबा ! तुम चिन्ता क्यों करौ, हमारे गिर्राज बाबा सब ठीक कराय देंगे।

नन्द—नांय कन्हैया ! वा जमुना में कालीनाग रहै है, यासौं नील-कमल लाइबौ महा कठिन है।

कन्हैया—बाबा जब मैं हूँ तौ तुम कायेकूं परेसान हौ, कहिदेहु कंस ते नीलकमल पहुंच जाइंगे।

(दृश्य–यमुना तट)

(कन्दुक के व्याज से श्रीकृष्ण का यमुना में कूदना और नाग नाथ कर एक करोड़ नील कमल लेकर बाहर आना)

कृष्ण—बाबा, मैय्या, दाऊदादा देखौ–देखौ मैं आइ गयौ, देखौ ग्वाल बालौ मैं आइ गयौ (यशोदा से लिपट जाते हैं)

नन्द यशोदा—लाला, कन्हैया तू हमें छोड़ कैं कहां गयौ हो, देख तौ तेरे मैय्या, बाबान की कैसी हालत है गई है रोय रोय कैं।

कृष्ण—मैया बड़ौ मजा आयौ, जमुना जी में।

सभी लोग—(एक साथ) मजा ?

कृष्ण—हाँ, बड़ौ मजा ! काली नाग पै नाच-२ कैं मैंने बाके फनन कूं तोरि-तोरि कैं बेहाल कर दियौ, फिर बाकी स्त्रीन ने मेरी पूजा कीन्ही और मैया ! जमुना जी कौ पानीऊ अच्छौ है गयौ ।

नन्द—कन्हैया तू ऐसे काम कायेकूं करै । हाय, हाय जा राजा कंस के पीछे हम अपने लालाए खोय देते अबई । हे भगवान तू ही हमारे लाला की रच्छा कर ।

कृष्ण—बाबा जे नील कमल राजा कंस के यहाँ पहुंचाय देउ ।

(सब का प्रस्थान)

[दृश्य–कंस का दरबार]

[फूल देखकर]

कंस—अरे कृष्ण–बलराम अबऊ बचगये । (चिल्लाकर) मन्त्रियौ ! जो कृष्ण-बलराम नांय मारे गये तौ याद रक्खौ, तुम्हारे सिर धड़न ते अलग करि दिये जांयगे । बहुत दिन तक मैं तुम सबन के भरोसे रह्यौ, परन्तु अब मोय तुम्हारौ भरोसौ छोड़नौ पड़ैगौ । कृष्ण–बलराम दो छोटे-छोटे बालकन ने मेरे इतने वीर बलबानन कौं धराशायी कर दियौ-पूतना-,तृणावर्त, शकटासुर, बकासुर, धेनुक, अघासुर, अरिष्ट, केशो, सबही तौ मारे गये । अब में स्वयं विनै नष्ट करूंगौ, हाँ मैं खुद नष्ट करूंगौ ।

मन्त्री—महाराज की जय हो ! राजाधिराज की जय हो ! महाराज ! मेरी प्रार्थना है कि मथुरा में धनुषयज्ञ कौ मेला करकें उन कौंऊ यहां बुलायौ जाय, और उनके आयबे पै आपके सभी बलबान योद्धा चाण्डूल, मुष्टिक, शल, तोषल आदि मार डारेंगे विन्हें ।

कंस—पै उन्हें यहाँ लाबैगौ कौन ! बे काएकूं आमेंगे ?

मन्त्री—महाराज उन्हें अक्रूरजी ते बुलवायौ जाय, क्योंकि अक्रूरजी उनके सम्बन्धीऊ हैं, और ये उन सबनकूं बिस्वासऊ देय सकेंगे ।

कंस—अक्रूरजी !

अक्रूर—हां महाराज !

कंस—यह काम तुम्हें ही करनौ है । तुम जाऔ और तेरस के दिन कृष्ण-बलरामकों संग लैकें आऔ । और वे नाँय आये तौ ··· ···

अक्रूरजी--तौ महाराज… …

कंस—बस घबड़ाय गये, अरे तुम नहीं जानौ हौ हा, हा, हा, तौ, तौ तुम्हारे प्राण लैलिये जांयेंगे । समझगये जाओ, जाओ अक्रूरजी ।

(दृश्य परिवर्तन संगीत)

(वंशी की ध्वनि)

कृष्ण—अरे दाऊ दादा ! ये तौ काकाजी आयरहे हैं । काकाजी डंडौत, डंडौत, काकाजी !

अक्रूर—आओ भैय्याओ ! कहौ आनन्द मैं तौ हो । नन्द यशोदा तौ कुशलते हैं ।

कृष्ण--हाँ, काकाजी ! कहाँ आनन्द मैं हैं, आप कहौ हमारे मामाजी तौ भले बने हैं ? और हमारे मारवेकौं अब कहा सोच रहे हैं । आप तौ उनके निकट रहौ हौ । कछु तौ बताय देउ ।

अक्रूरजी—भैया ! मैं पापी हूँ । राजा कंस के आधीन हूँ, याते अब मैं विवश है गयौ हूँ । मथुरा में बड़ौ भारी मेला है, तामें तुम्हें बुलाइवे आयौ हूँ जाते तुमहूँ वा मेला कू देखौ ।

कृष्ण—(प्रसन्न होकर) वाह काकाजी वाह । खूब याद आई हमारी । मेला दिखाओगे या काऊ ते पूजा करवाओगे ? वह मामा हमें छोड़ैगौ ?

अक्रूर-नांय भैयाओं । या समै तो वहां बड़े-बड़े राजा-महाराजा आवेंगे, या समय कंस कछु नहीं कर सकैगौ ।

कृष्ण—हाँ, हाँ चलेंगे काकाजी, अवश्य चलैंगे, पधारौ घर पधारौ ।

(प्रातःकाल कृष्ण बलराम का मथुरा गमन यशोदा का विलाप)

पदः—

जसुमति बार बार यों भाखैं ।

है कोई हितू हमारौ व्रज में चलत गोपलहि राखै ॥

कहा काज मेरे छगन-मगन कौं नृप मधुपुरी बुलायौ ।

सुफलक सुत मेरे प्रान हरन कौं कालरूप हो आयौ ॥

वरु यह गोधन कंस लेय सब मोहिं बंदी लै मेलै ।

इतनो माँगत कमलनयन मेरी आँखिन आगे खेलै ।।

कृष्ण—मैया औ मैया ! देख मैया, हम मथुराजी कूं जाइ रहेहै, जल्दी ही आवेंगे ! (चरण छूते है)

यशोदा—(छाती से लगाकर) मेरे लाल ! वा राजा कंसए तुमते कहा काम आय पर्‌यौ । जो मेरे आंखिन के तारेन कू मोते दूर कर रह्यौ है ।

कृष्ण-बलराम—अरी, मैया तू तौ रोय रही है, नहीं मैया रोवै मत बाबाऊ तौ हमारे संग जाय रहे हैं, सब ग्वाल-बाल जाय रहे हैं फिर डर कैसो, फिर मैया हम तौ मेला देखवे कूं जाय रहे हैं। (कृष्ण बलराम का मथुरा गमन सुनकर गोपियां दौड़--दौड़ कर आती हैं ।

गोपियाँ--हे श्याम सुन्दर, ! हे मधुसूदन, ! हे कृष्ण ! तुम हमें छोड़ कें काहे कू जाय रहेहौ, कहा हम मन्दभागिनीन ते कछू अपराध है गयौ । कहा हम अबला तुम्हारे दर्शन के योग्य नहीं हैं । हमें क्षमा कर देऊ प्यारे, हमें छोड़ कें मत जाऔ । (रो रोकर आगे पीछे गिर पड़ती हैं)

कृष्ण-बल०—अरे ! अरे ! सखियों उठौ, अरे तुम इतनी व्याकुल काहे कू हौ गोपियौ ? हम जल्दी आवेंगे, बहुत जल्दी । जाऔ सब अपने अपने घर लौट जाऔ ।

यशोदा—हां सखियों ! मेरे छगन-मगन कू रोकौ सखियौ ।

गोपी—मैया ! आपके लाला काहिकू जाय रहे हैं मैया, मैया तू ही रोक इन्हें, रोकलै मैया । हम इनके बिना नहीं रह सकिगीं । (मूर्च्छित हो जाती हैं)

कृष्ण—काकाजी ! रथ कूं आगे बढ़ाऔ नहीं तौ गोपी आगे कूं नहीं वढ़न दिगीं । और मेरौ चित्त हू या समय डगमगाय रह्यौ है ।

(रथ के चलने की ध्वनि दूर होती जाती है)

गोपियां—अरे कहा हमारे प्रियतम चले गये, हे श्यामसुन्दर ! हे नाथ ! … …तुम तुम कहां चले गये नन्दलाल (जाकर यशोदा के पास रोने लगती हैं)

(दृश्य परिवर्तन–संगीत)

(दृश्य–मथुरा)

[मथुरा में कंस को अक्रूरजी ने समाचार दिया]

कंस—अभी तक अक्रूरजी नांय आये। मन्त्रियौ ! (दांत पीसकर) यदि कृष्ण और बलराम न आये तौ मैं जान लुंगौ कि मेरे दिन अच्छे नहीं हैं, फिर उन्हें मारिवे कौ मौकौ हू कैसें मिलैगौ ?

द्वारपाल—महाराजाधिराज की जैहौ जैहौ। महाराज अक्रूरजी पधार रहे हैं, गोकुल ते आये हैं।

कंस—आऔ, आऔ अक्रूरजी आऔ। आये वे दोनों ?

अक्रूर—हां, महाराज ! वे मथुरा ते बाहर ही ठहर गये हैं क्योंकि ब्रजवासी अपने गाढ़न में हैं, यासौं वे सब वहीं रुकेंगे और मेला में वे कल जरूर आवेंगे।

कंस—चाणूर, मुष्टिक, शल, तोषलौ ! मेरौ काल आय गयौ है काल तुमनै हजारन डंड-बैठक पेल डारीहैं। बड़े-बड़े योद्धाऊ तुमनें पछाड़ दिये हैं, आज तुम्हारी परीक्षा कौ दिन है। और हाथीवान ! तुम्हारौ हाथी द्वारपै अड़ौ रहै, और जब कृष्ण-वलराम आमें तो बिन्हें जान ते मार डालै, रौंद डालै, मैं अब सेना की तैयारी देखं।

(दृश्य परिवर्तन–वाद्य ध्वनि)

ग्वालवाल—अरे लाला कन्हैया ! तू बहुत बड़ाई करतो अपनी या नगरी को कहा अब नांय दिखावैगौ ?

कृष्ण—हाँ, हाँ ग्वालबालौ ! चलौ तुम्हें मथुरा दिखाऊं।

ग्वाल०—लाला ! ये कपड़ा तौ बड़े मैले-मैले है रहे हैं, और ये नगर तौ बड़ौ सजौ सौ लग रह्यौ है।

कृष्ण—चलौ, मथुरा मैया पूरी करेंगी मनोकामना।

ग्वाल०—अरे ये जाय रह्यौ है धोबी, क्यों धोबी ! हमारे ये कपड़ा धोय देगौ ? अरे ये तौ ऐसें देख रह्यौ है मानों खाय ही जाइगौ।

धोबी—खबरदार बालकौं ! जवान सम्भाल लेऊ, नांय तौ एक घूंसा में सबन के प्राण उड़ जाँयगे।

(कृष्ण ने धोबी को पटक कर दे मारा, सखाओं को कपड़े पहिनाये)

ग्वाला—भैया अब तो चन्दन लगै माथेन पै।

कृष्ण—मथुरा मैया देयगी। देखौ! बो कौन आय रही है।

(सामने से कुब्जा थाल में चन्दन लेकर आती हुईं)

ग्वाला—अरी ओ कुबड़ी! तू जा थाल में कहा ले जाय रही है। हमारे राजा पूछ रहे हैं।

कुब्जा—चन्दन है जामैं, कंस कूं मेरौ पिसौ भयौ चन्दन बड़ौ प्यारौ लगै है। याते वहीं वाके लगायबे जाय रही हूँ।

ग्वाल—अरी हमारें लगायदे याकूं।

(सब चन्दन लेकर लगाते हैं)

कृष्ण—अरी कुब्जा! ला तेरे कूबकूं सीधौ कर देऊं।

ग्वाला—हा हा हा हा—

(कृष्ण कुब्जाको पकड़कर उसक कूब सीधा कर देते हैं, और कुब्जा नवयुवती बनजाती है श्रीकृष्ण बलराम सखाओं के साथ रंगभूमिकी ओर आगे बढ़ते है।)

दृश्य परिवर्तन

(रंगभूमि–नगाड़े बज रहे हैं। कोलाहल)

(आये कृष्ण, कृष्ण आये, आय गये, धोबी मरगयो की अवाज)

कृष्ण—अरे हाथीवान्! भैया हमें रंगशाला में जान दै याकूं हटायलै द्वार पै तें।

(हाथीवान ने आक्रमण कर दिया)

वलराम—अरे लाला! कन्हैया! जाने कितने ऐसे पड्डा मारे हैं, खैंच जोर ते याकू मैं पीछे ते धक्का दऊं हा हा हा हा—

(कृष्ण बलराम खींच-खींचकर हाथी को मार देते है और रंगशाला में प्रवेश करते हैं, उन्हें देखकर चारौ पहलवान कुश्ती लड़ने को लल कारते हैं)

चाण्डूल—अरे तौ यही है कृष्ण। (तालठोककर) आरे आ कन्हैया कुश्ती लड़लै।

कृष्ण—अरे हम तेरी बराबर के नांयहैं जो लड़ैं ।

वलराम—तू तौ बावरौयै या मौटे में कहा धरो है, मैं अबई पछाड़ूं जाय । आरे चाण्डूल लड़लै ।

(सभी पहलवानों को मार देते है, और उछल कर कंस के पास पहुँचते हैं)

कृ०, ब०—मामाजी प्रणाम, मामाजी प्रणाम !

कंस—अरे इन्हें पकड़ौ मारौ, भागौ, बांधौ !

वलराम—अरे मामाजी हम तौ तुम्हारे भानजे हैं ।

कृष्ण—दादा ! मैंने चुटिया पकड़ लीनी है याकी, अब नीचैं गेरूं याकूं, तू धक्का दै जोरते । दै धक्का दादा ।

वलराम—लै लाला सम्भारियो ! नीचौ मत है जइयौ ।

(अ ड़ ड़ ड़ ड़ धड़ाम)

(कंस नीचे गिरकर मर जाता है । कंस के मरते ही उसके ६ भाई आते हैं, भागौ, दौंड़ौ, पकड़ौ, मारौ की आवाज)

कृष्ण—दादा ! सम्भरियों आय रहे हैं ये सब मार देंऊ ।

बलराम—आ लाला ! इन सबनेंऊ ठिकाने लगाय दें ।

(इस तरह सभी को मार गिराया और फिर कंस को खींचकर घसीटते हुए मथुरा के विश्रामघाट पर लायें और यहीं विश्राम किया)

माथुर ब्राह्मणन के टोल के टोल कोई कंस की ढालकों लठ्ठ में बांधकें, कोई खाट के पाये कों लठ्ठ में, लपेटे तो कोई कंस की तलवार कौं लैकैं और कोई कंस की मूछन कू लैकें हर्षोल्लास में सवारी के आगें-आगें नाच रहे है । ककोर सरदार और मिहारी सरदारन कौ दल अन्य नौसौनवासी आदि दलन के नव जवान लोगन के संग सम्पर्क बनातौ भयौ वीर रस में परिपूर्ण योद्धान की तरैं बड़े शौर्य और उल्लास में बाजार में सरपट दौड़-दौड़ कें उछर-उछर कें 'गीत' नृत्य और वाद्य ते एक अद्भुत छटा दिखाय रहे हैं । उनके मुख ते ये अक्षर बड़े जोर और जोश ते निकस रहे हैं:--

"कंसै मार मधुपुरी आये

कंसा के घर के घबराये

मार मार लठ्ठन धूर करि आये

छज्जू लाये खाट के पाये

ये आये, ये आये

वाई कंस की मूछें लाये, वाई कंस की डाढी लाये

मार-मार लट्टन धूर करि आये, कंसे............ ।

अगर चंदन सो चौक लिपाये

गज मुतियन के चौंक पुराये, घर-घर मंगल बजत वधाये ।

सब सखान मिल मंगल गाये, कंसे............ ।

(यै एक विलक्षण नृत्य है जो देश के सब नृत्यन में अपनौ विशेष स्थान रखै है)

घर-घरमें कंस वधकी चर्चा होय कहूँ लट्ठन कूं सजानौ, कहूँ अनेकानेक पकवान बनानौ, और कहूँ स्त्रीन के झुण्ड के झुण्ड जय-जयकार में तल्लीन हैं। या प्रकार ते यह मेला प्रतिवर्ष सबनके द्वारा बड़े आनन्द के संग देखौ जाय है और भगवान् की प्राचीन लीलान की झाँकी प्रस्तुत कर मथुरा-वासिन की प्रथम स्वतन्त्रता कौ परिचायकहू है ।)

* पुरंजन *

(श्रीमद्भागवत पर आधारित दार्शनिक रूपक)

प्रथम दृश्य (संगीत की ध्वनि)

नारद—(मन ही मन) (मैंने बालकनकूं चेला तो बनायौ ध्रुवकूं, प्रह्लादकूं और अनेकनकूहूँ उपदेशदियेहैं आज या राजा प्राचीनबर्हीकूं चेला बनाऊंगो)

(स्पष्ट स्वर में) नारायण–नारायण–नारायण (सभी सभासद खड़ेभये नारदजीकौ स्वागत कियौ और राजानेंभी नमस्कार पूर्वक बिनती करी)

राजा प्राचीनबर्हि—अ हा हा ! आज मेरे भाग्य जाग गये हैं, देवर्षि नारद ! आपकौ स्वागत है पधारौ । यहाँ ऊंचे आसन पै बिराजौ ।

नारद—राजन् ! भाग्यमान के घर तो भगवान्हू जायबेकूं तरसैंहैं । आप बढ़े भाग्यशाली हो । धरतीमें बढ़े-बड़े यज्ञ करबे वारेनमें तुम्हारौ नाम पहिलें लियौ जाये है ।

राजा—धन्यहो महाराज ! धन्य हो ।

नारद—और तुम्हारौ नामही कैसौ विचित्र है प्राचीनबर्ही । राजन् ! यज्ञमें तुमने पूर्व दिशामें कुशानते बड़ी धरती ढंक दीनी या ही ते तो तुम्हारो नाम प्राचीनबर्ही पर्यौ है ।

राजा—हाँ, हाँ महाराज ! ये तो बड़प्पन है, मेरो कछु जस नाहिं है । ब्राह्मणनकी कृपा है महाराज ।

नारद—राजन् ! कहो राज्य में और घर में कुशल तो है ?

राजा—महाराज ! आपते कहा छिपाऊं सब कछु कुशलहै पर मेरे बेटा प्रचेता तपस्या करिवेकूं गयेहैं जो आजतक लौटिकैं नहींआये कहा करूं ? कौन सू कहूँ ? महाराज दस हैं दस और एक कौ हू पतौ नहीं, हाय ।

नारद—राजा ! तुम बढ़े भोले हौ व्यर्थ की चिन्ता है । पुत्रचिन्ता, धनचिन्ता, घरचिन्ता येसब मायाजाल हैं मायाजाल । इनमें जितने लगौ उतनौ ही दुःख मिलैहै ।

राजा—महाराज ! पुत्रचिन्ता तो बड़ी चिन्ताहै । शास्त्रनमें भी पुत्र की प्राप्ति के बढ़े यत्न, अनुष्ठान लिखे गये हैं । और पितृश्वरनके ऋणते उरण ह्वैवे कौ साधनहूँ तो पुत्रहै ।

नारद—हां, राजा ! बात तुम्हारी सही है परन्तु मैं तौ कहूँ हूँ कि जो गये उन्हें जान देहु उनकी चिन्ता न करनी, चिन्ता और चिता में चिन्ता बड़ी होय है । क्योंकि चिता तो मृतककूं दहैहै और चिन्ता जीवित कूं फूकती रहै है, ऐसौ लिख्यौ भी है:—

चिता चिन्ता द्वयोर्मध्ये चिन्ता एव गरीयसी ।

चिता दहति निर्जीवं दहेच्चिन्ता सजीवकम् ।।

राजा—महाराज ! आप ठीक कहौ हौ—मैंने बड़े-बड़े यज्ञ हू या चिन्ता निवृत्ति कूं किये पर ये बढ़ती ही गई घटी नहीं ।

नारद—यज्ञ, चिन्ता निवृत्ति कूं ? कितने किये राजन् ?

राजा—अनेकन यज्ञ किये मुनिराज ! उनमें लाखन बकड़ा, घोड़ा आदि पशु हू बलिदान में चढ़ाये पर·······।

नारद—यज्ञन में पशुबलि ते शान्ति नहीं मिली ! हा हा हा । अरे निर्बुद्धि पशुबलि करेते शान्ति मिलैहै ? यज्ञन में बलिदान की प्रथा बड़ी ही अपवित्र है अपवित्र । यज्ञ तो भगवान् को शरीर है वामें उनकी आराधना करनी चहिये, पूजा करनी चहिये । राजन् ! इन पशुनकूं मारिकैं जो विचारे मूक प्राणी हैं कछु कर नहीं सकें हैं, उनकूं मौत के घाट उतारनो ? हाय बड़े कष्ट की बातहै । नारायण-नारायण-नारायण ।

राजा—महाराज ! ये तो वेद की विधि है यामें मेरौ कहा दोष है ? आप लोग ही तो·······।

नारद—नहीं, नहीं, राजन् ! वेद कूं यामें मध्यस्थ मत बनाऔ । वेद तो सबकूं समान देखें हैं चाहे मनुष्य होय या पशु या पक्षी । वो ईश्वर की वाणी है वामें अन्याय की कल्पना कहाँ ? ये तो घोर अन्याय है राजन् ! निरीह पशुन कौ वध ! हा, बड़ी निर्दयता है मानव की राजा ! अपने स्वार्थ कूं मनुष्य पूरौ करनौं चाहै बस और कछु नहीं है । स्वर्ग चहियें स्वर्ग ?

राजा—महाराज ! पशुन की तो यज्ञ में मरिवे ते गति होय है ।

नारद—नारायण-नारायण राजन् ! येसब बदलौ लेयहैं अगले जन्ममें ।
[आकाश में बड़ौ कोलाहल मचन लगौ, पशुनकी आवाज आमनलगी]

राजा—अरे ये हल्ला कायेकौ मच रह्यौ है । महाराज ! ये तो पशुन की हू बड़ी भीड़-भाड़ सी लग रही है । बकरा, घोड़ा मारो-काटो चिल्लाय रहे हैं । बचाओ महाराज ! रक्षा करो । रक्षा करो ।

नारद—हा, हा, हा ! महाराज डरगये हा, हा, हा । अरे येतौ तुम्हारे परिचित पशु हैं, ये वही हैं, राजा ! जिन्हें तुम यज्ञनमें मार चुके हो ।

राजा—ये अब कहा करैंगे महाराज !

नारद—ये तुम्हारी प्रतीक्षामें है राजन् ! जब तुम धरतीसे दूसरे लोकमें जाओगे तब ये बदलौ लेंयगे तुमते बदलौ....................

राजा—महाराज ! कहा. मोकूं ये मार डालेंगे मो मोय... बचाओ....–।

नारद—घवड़ाओ मत, घवड़ाऔ मत । मैं अभी शक्ति के बल से हटाऊं सबकूं ।

(शान्ति)

नारद—नारायण-नारायण, राजन् !

राजा—महाराज, महाराज !

नारद—भयभीत न होहु राजन् ! देखो, ऊपर कुछ नहीं हैं ।

राजा—महाराज ! कहाँ गये सबके सब कहांगये ? मोयमारेंगे मोय..............।

नारद—राजन् ! हा, हा, हा, ज्ञानी हो ज्ञानी । इतने क्यों डरपौ हौ । यज्ञ करो यज्ञ तब प्रसन्नता आवेगी ।

राजा—महाराज बड़े यज्ञ तौ कर चुकौ हूँ ।

नारद—वे यज्ञ नहीं हैं जिनमें पशुनके लोहू निकास विन्हें अग्नि मेंडाल देउऔर वे छटपटावें तड़फें हैं, रोवैं हैं, डकरावें हैं । राजन् ! दूसरे यज्ञ करो ।

राजा—महाराज दूसरे यज्ञ कौन से होय हैं ?

नारद—सुनो राजन् ! वाकूं ज्ञान यज्ञ कहें। वा यज्ञ में घी की आहुति नहीं पड़ै हैं, स्वाहा–स्वधा नहीं होय। वामें तो जीवात्मा–परमात्मा कौ विचार होय है। जीवन–मरण को चक्र-चिन्तन कियौ जाय है।

राजा—हाँ महाराज ! अवश्य कराऔ मोय ज्ञान कौ जग्य ही करवाऔ।

नारद—हाँ, पहले तुम्हें एक चरित सुनाऊँ।

राजा—सुनाऔ महाराज !

नारद—एक पुरंजन हौ और एक वाकौ मित्र हो अविज्ञात। वे दोनों एक बार हिमालय ते आये, घूमते भये नौद्वारे के नगर पै गये। वहाँ पुरंजन फंस गयौ, बड़ी देर में अविज्ञात ते आय कें मिल्यौ–

(दृश्य परिवर्तन)

(पुरंजन और अविज्ञात)

अविज्ञात—पुरंजन !

पुरंजन—हां मित्र !

अविज्ञात—अहा ! देखौ कैसौ सुन्दर समै है–कल-कल करती नदी बहि रही है, और कुहू-कुहू करिकैं कोयल बोल रही हैं।

पुरंजन—और या मोर कूं देखौ कैसो नाच रह्यौए।

अविज्ञात—या उपवन की सोभा तौ देखिबेई योग्य है।

पुरंजन—और नीचें याय तो देखौ कैसी जगर-मगर है रही है। अरे ये न तौ वन है और न ये पहाड़ है, ये कहा है, मित्र ?

अविज्ञात—मित्र ! ये तौ नौद्वारे की नगरी है नगरी।

पुरंजन—ये नगरी कैसी ! चलौ पास चलें देखें।

अविज्ञात—ना मित्र ! याय तो दूर ते देखिलेउ। पासजाओ तो पकर लेय है। सो भूलकैंहूँ मत जइयो भूलकैंहूँ।

पुरंजन-क्यों भैया ! यहाँ का कोई माया चिपकी है ? या कोई बाधा है ?

अविज्ञात—अरे मित्र ! तू तौ बड़ोई भोरौहै।

पुरंजन—क्यों ?

अविज्ञात—अरे वावरे ! ये नगरी नौदरवाजे वारी है, पाँच दरवाजे यामें पूरव दिशा की ओर हैं, एक उत्तर में और एक दक्षिण में तथा दो दरवाजे पश्चिम में हैं ऐसें नौ दरवाजे हैं ।

पुरंजन—मित्र ! मैं हाथ जोडूं तुमतो या उपवन की सैर करौ और में अभी याकूं देखि कैं आऊँ ।

अविज्ञात—अरे मित्र ! मेरी मानजा, मानजा । पुरंजन, पुरंजन ।

(पुरंजन चलिदियौ, भैया जल्दी आऊँ मैं, जल्दी आऊँ मैं…………)

पुरंजन—यांही मिलियो, अविज्ञात यांही मिलियो । आहा, कैसी सुन्दर नगरी है । अहा, ये तो बैकुण्ठहुते बढ़ि कैं हैं, मैंनें तो ऐसी नगरी कबहूँ नाहि देखी–

(दृश्यः–नौद्वारे की नगरी का)

(एक स्त्री, बाके संग ११ सखीं और ५ मस्तक कौ सर्प स्त्रीके पैर के आभूषण की ध्वनि)

पुरंजन—आहा ! यहां तो कोई सुन्दरी स्त्री हूँ विराजमान है, ये अरे-अरे (भयमुद्रा) ये सर्प ५ मस्तक वारौ ! हाय, कैसें भगूं ?

स्त्री—अरे-अरे ये कौन है ? यहाँ कौन ते पूछिकै आयौहै ?

पुरंजन—अरी देवी ! मैं तो पथिक हूँ या नगरी कौं देखिवे कूंआय गयौ हूँ । सो मोय क्षमा करौ, अब नहीं आऊँगौ । मोय या सर्प ते बचाऔ, बचाऔ बचाऔ । [सर्प उसी ओर आता है]

स्त्री—अरे ! याते डरपौ मती ये कछु नहि करैगौ । ये मेरे नगर कौ कोटपाल है कोटपाल ।

पुरंजन— अजी मैं तो डर गयौ । या नगर कौ स्वामी कौनहै ।

स्त्री—अजी! या नगर कौ स्वामी तो कोऊ नहीं है, काम-काज मैं ही देखूं हूँ । संग में मेरे साथी हैं, ये सहायता करें मेरी ।

पुरंजन—स्वामिनी जी ! मेरी एक प्रार्थना है ।

स्त्री—कहो, कहो अवश्य कहौ ।

पुरंजन—मेरी इच्छा है कि मैं या नगरी कूं देखूं ।

स्त्री—आओ, देखो और जहाँ चाहो सोई मनोरथ पूरौ करौ।

(पुरंजनी के हाव-भावन तें पुरंजन बस में है गयौ)

पुरंजन—अरे। यहां तो पहाड़ हू हैं, नदी हू हैं।

स्त्री—देखौ, बड़े-बड़े पहाड़ हैं, नदी हैं,। और सरोवर हू हैं। कमल हू खिले हैं। देखौ, सोने-चाँदी के शिखर और हीरा पन्नान ते जड़े कपाट देखौ

पुरंजन—आहा, मैंने तो रतन कवहूँ देखे ही नहीं हैं।

स्त्री—और ये देखो, वन-उपवन हू लगे हैं।

पुरंजन—फलनते लदे हैं। वाह, कैसे-कैसे फल हैं आम, जामुन, केला, नारँगी, नारियल।

स्त्री—और ये देखौ कि याके द्वारन पै कैसे अच्छे-२ परदा टंग रहे हैं।

पुरंजन—इनकौ सुख लैवे वारो और कोई पुरुष नहीं है ?

स्त्री—हाँ, हाँ, कोइ नहिहै, आप ही बनौ याके स्वामी।

पुरंजन—आ, हा, हा, हा,। आप तो मन की बात जान गई हैं, मैं कहा कहूँ अब, तो मैं यहाँ रखौ जाऊगो।

स्त्री—नाहिजी, रखे नहीं जाओगे आप तो नगर के और मेरे हू मालिक बनो मालिक।

पुरंजन—अजी मैं तो कहूँ चरनन में परयौ रहूंगो।

(दोनों हँसते है)

स्त्री—देखौ। ये भोग, ये वस्तु, ये व्यंजन, ये कपड़ा-लत्ता, ये गहने-हार, मुद्रिका, तिलक, सब कछु आप लैलेउ।

पुरंजन—वाह, वाह। धन्य हो, धन्य हो, आपकौ नाम कहा है ?

स्त्री—आपकौ नाम कहा है ?

पुरंजन—मेरौ नाम है पुरंजन।

स्त्री—आपकौ नाम पुरंजन तौ मेरौ नाम है पुरंजनी मोय स्वीकार करो।

आओ दोनों चलें

" गन्धर्व-विवाह " बाजेन को ध्वनि

" हरि, ओं स्वस्तिन इन्द्रो वृद्धश्रुवाः. " वेद ध्वनि—

स्त्रोन के गीत मंगलाचार

जनता—महाराज पुरंजन की जै।

पुरंजनी महारानी की जै।

पुरंजन—अब कहाँ चलौगी ?

स्त्री—आऔ मेरे शयन कक्ष में चलौ।

पुरंजन—चलौ।

स्त्री—देखौ मैं जैसे कहूँ वैसे ही करौगे।

पुरंजन—हां, हां, आप नाचौगी तौ मैं नाचूंगो, आप गाओगी तो मैं हूँ गाऊँगो, आप चलौगी तो मैं चलूंगो। आप बोलौगी तो मैं बोलूंगो।

स्त्री—हाँ, हाँ ऐसें ही पटेगी दोनोंन की। देखो-मोकूं कबहू छोड़ कैं तो नहीं जाओगे ?

पुरंजन—अजी आप जैसी अप्सरा, मेरी प्राण-प्यारी छोड़वें कूं होयगी मेरी प्रानन प्यारी हौ आप।

स्त्री—तौ याद रखियौं कबहूँ छोड़कें मत जइयौं।

(दोनों विश्राम करते हैं)

(दृश्य-सायं काल)

(वन में पुरंजन पशु-पक्षिन कौ मारन लगौ, हा, भालू, गज, सिंहन की आवाज। सर्र—३ वाणन की आवाज। कोलाहल— ये मरौ हरिण, ये भालू, अरे ये खरगोश)

पुरंजन—चलौ घर चलैं।

(दृश्य—पुरंजन का भवन)

[शय्या पर पुरंजनी]

पुरंजनी | स्वामी कहाँ चले गये ?

पुरंजन—रानी मैं कहूं नाँय गयौ पै तुम्हारो मोपै बहम रह्यौ करै कि मैं कहूं काऊ दूसरी स्त्री ते बोलवे-चालवे जाऊं।

रानी—राजा ! मैं ये नांहि कह रही मेरी सुनो तो।

पुरंजन—प्यारी पुरंजनी ! कहा सुनू। मेरो मन तुम्हारे देखिवेई में लग्यौ रहै है।

[पुरंजन का पुरंजनी से आलिंगन आदि]

रानी—हटो-अरे-रे, रे, रे ये कहा-मैंने तुम्हें यालिये थोरेई टेरौए जब देखूं तब तुमै येई आवै कछु मेरीऊ दसाकौ विचार करौ।

पुरंजन—तुम्हारी दसा, कहा विचारूँ, कितनी सुन्दर लग रही हो। तुम्हारे गुदगुदे देह पै खिले भये कपोल, तापै, गोरौ रंग और ताऊ पै कालौ तिलक कैसौ सुहामनो लग रह्यौ है। रानी ! तुम्हारौ-तुम्हारौ मुख तौ चन्द्रमा कू जीतवे वारौए, और तुम्हारे केशपास चमरिगौन कू लज्जित करैएं। और आंखिनकू देख कें खन्जन हू शरमाय गये हैं।

रानी—अरे तुम तो कविता करिवे लगे, कछु मेरीऊ सुनौगे।

पुरंजन—और कौन की सुनूंगो, जो तुम्हारी नाँय सुनूंगो।

रानी—तो कछु सोच रहे औ।

पुरंजन—कहा ?

रानी—अरे ! तुम कछु समुझौई नांओ। मेरौ वदन देखिकैं न समझ लेउ। सुनौ, मेरो जी मिचराबै और काऊ काम में मन नाय लगै, कछु खाऊँ-पीऊँ तौ पचै नहीं, और मेरौ ज्वर कछु बढ़्यौ २ सौ हैरह्यौ है।

पुरंजन—वाह वाह वाह वाह—अरे रानी ! समझ गयौ । यामें कहा डरबे की बात है मालुम परै कि कछु अच्छौ समय आयौए। घबराऔ मती रानी ये तो बालक हैवे की सूचनाए सूचना। अरे ! तुम्हारी गोद भरैगी गोद, और सूने नगर में कछु रंगत आवेगी। सो बड़ी खुशी कौ समाचार मिल्यौ। आऔ तुम्हारौ स्वागत कर लऊं।

[पुरंजनी हिलती है, पुरंजन रानी के चरण दबाता है]

रानी—यदि मैं विपत्ति में फंस गई तौ।

पुरंजन—महारानी मैं जो संगमेऊं। सब समयमैं संग रहूँगौ। चिन्ता मत करौ नैकऊ।

रानी—तो प्रतिज्ञा करौ, अब मौकूं कहूँ छोड़कैं नहिं जाओगे।

पुरंजन—रानी प्रतिज्ञा करूँ, जब तक बालक नहीं होयगौ तबतक अब मैं सिकारकूं हू नही जाऊंगो और न घूमवे-फिरवे जाऊंगो। मेरो विश्वास रखौ रानी।

रानी—तो अब घर कौ काम तुम्हेंई देखनो परैगो। और कौन अपनौ सौ भोजन बनावैगो।

पुरंजन—अरे थोड़ी सी बातए ये तो–मैं बड़ौ अच्छौ भोजन बनायवो जानूंऊं, पूड़ी, मिठाई, लड्डू, जलेवी, मैं ये तो अच्छे ते अच्छौ बनायवौ जानूं। नौकरानी आवै तो आवै, और नहि तो चौका बरतन हूँ मैं खुद ही करि-लेऊँगो। आप तो पलंग ते पांव मति रखौ रानी।

रानी–हाँ महाराज ! अब मैं पाँव धरूँतौ मोय डरलगै, दूसरे, मेरीदशा साधारण स्त्रिनते कछु अलसाई लग रही है। दिनभर उपद्रव होतौ रहै। मैं जैसी स्त्रीई याकू सहन कर रही हूँ, औरके बस कौ काम नाहि।

पुरंजन—प्राणप्यारी ! तुममें सब स्त्रीन कौ तेज छुप गयौ है। आपकू कछु अनहौनी बात होय, पै डरौ मत जो होनों होयगो सोई तो होयगो, वड़ेन कौ कहनौ है कि:—

जो कछु लिखी विधाता भाल में।
सोई पावत स्वर्ग भूमि पाताल में॥

आओ रानी मैं तुम्हारौ मन, नाचकें लगाऊँ:—

[पुरंजन का नृत्य]

वाद्य ध्वनि

रानी--थक गये हौ आऔ बैठो। मैं तुमपै बड़ी राजीऊँ। तुम जैसौ पुरुष वड़े भाग्य ते मिलौए।

पुरंजन—और तुम जैसी प्राणप्यारीऊ मेरे बड़े भाग्य ते मिलीए।

[दोनों का प्रणयालिगन]

पटाक्षेप

दृश्य--परिवर्तन

रथ की आवाज—घर्र-र्र-र्र—घर में पुरंजन जब आयौ पुरंजनी न दिखाई पड़ी। एक-एक करकें घरके कक्षन कू देखन लगौ।

पुरंजन—पुरंजनी ! पुरंजनी ! ओ पुरंजनी ! महारानी ! ओ प्राण-प्यारी ! अरे सेवकौ ! कहाँ गई मेरी प्राणप्यारी ? जल्दी बताओ, जल्दी बताओ। अरी पुरंजनी कहाँ है ?

सेविका—महाराज !

पुरंजन—हाँ, हाँ जल्दी बताओ कहाँ है मेरी प्रिया।

सेविका—महाराज ! वे तो कोपभवन में जाती देखीं।

पुरंजन—ऐं कोपभवन में, हायमरौ, अरे अब कहा करुँ अरी सेविके जल्दी बताय रस्ता, किधर ते जाऊँ ! किधर ते जाऊँ। जल्दी चलौ, जल्दी चलौ।

सेविका--आओ महाराज ! ये मार्ग है नीचे के तहखाने कौ याही में गई हैं महारानीजी। देखौ वे पड़ी हैं:—

पुरंजन--स्वामिनी, स्वामिनीजी ये सेवक पुरंजन आयौए आपकूं नमन करै है।

(पुरंजनी मुख फेर लेती है, केस बिखरे हैं अश्रुधारा बह रही है)

पुरंजन--हा, हा, आपकी ये दशा ! ये कौन अभागौ है जानें अपराध करौ है, मैं वाकूं अवश्य दण्ड देऊंगो, नहीं, नहीं आपकौ तो मैं सेवक हूं आप दण्ड देऊंगी। मस्तक की बेंदी कहाँ गई ? अरे ! ये खुले केस, आँसुन की धार हाय, ये कहा भयौ, कहा भयो महारानी जी।

(रोने लगता है–ऊं ऊं ऊं ऽ ऽ, सुप सुप सुप)

पुरंजनी—तुम मोकूं छोड़कैं कहाँ चलेगये भूलिगयेका ?

पुरंजन----हाय बड़ौअपराध भयौ, बड़ौ अपराध भयौ। मैं पांवन परूं (कान पकड़ता है) "कान पकडूं" अब ऐसो कबहू नहीं करूंगो। और मेरौ अपराध क्षमा करौ। मैं स्वयं ही दुःखी हूं। ताकूं अधिक दुःख अब मत देउ।

पुरंजनी--पुरंजन तुमने मोकूं कबहूँ अकेलौ नहीं छोड़ौ यासूं मेरे चित्तमें बड़ौ ही कष्ट भयौ है। आज के बाद अब कबहूँ ऐसौ करौगे तो मैं अवश्य अपने प्राणन कूं त्यागूंगी।

(या प्रकार सूं दोनों बड़े ही वार्तालाप को आनन्द ग्रहण करते भये भोगन कूं भोगन लगे। ग्यारह सौ लड़का और एक सौ दस कन्या उत्पन्नभई

आधीअवस्था दोनोंन की बीतगई। कन्यानको विवाहकियौ, पुत्रनको भी कियौ। कन्या वाचाल देश के राजा कू ब्याही गई। एक-एक पुत्र के सौ-सौ लड़का पैदा भये। याते समस्त नगर पुरंजन की सन्ताननते भरि गयौ। बड़े आमोद-प्रमोद हौन लगे।)

(दृश्य–परिवर्तन)

(सभामें—देवाधिदेव इन्द्र सिंहासन पर विराजमान हैं। चारों ओर देवगण स्तुति कररहेहैं, और जय हो २ का उच्चारण कर रहे हैं।)

(वाद्य ध्वनि)

द्वारपाल--महाराज की सदा ही जय हो।

इन्द्र—कहा बात है द्वारपाल ?

द्वारपाल—महाराज द्वार पै एक स्त्री बड़ी देर ते खड़ीए आपकौ दरस चाहै, आप आज्ञादेउ।

इन्द्र—लेआओ, वाकूं भीतर ले आऔ।

द्वारपाल--अरे इतमाई आऔ, इतमाई। देखौ, वे बैठे सिंहासन पर हमारे स्वामी। इतकू चलौ.............।

इन्द्र—अरे कौनए।

कालकन्या—मैं हूँ महाराज ! कालकन्या मेरौ नाम है।

[वृद्धा, कम्पित स्वर, श्वेत बाल, झुर्री को रूप, खांसतौभयौ मुख दीखै और कभी नवीन युवती]

इन्द्र—अरे, कहा चाहौ तुम ? और कैसें आई हौ ? पै अरे कबहूँ तुम नवयौवना तरुणी बनकैं दीखौ हौ, कबहूँ बूढ़ी है जाऔ। ये कहा बात है ? मोय भ्रम है गयौ कि ये बूढ़ी है।

(खाँसी की आवाज—खुल्लऽऽऽऽ..................)

कालकन्या--महाराज घबड़ाय रहेऔका। काहू दैत्य ते संग्राम करिकैं आयेहौ या लड़ाईकी तैयारी कररहे हौ। मेरौ रूपहू नाहि दिखाई परैहै का ?

[दिव्य स्वरूप का दर्शन कराती है]

इन्द्र--अरे ये तो बड़ी सुन्दरी लगन लगी और जाकौ अनिन्दा रूप मोकूं आकृष्ट करिवे लग्यौ है। अरे देवगण ! देखौ तो ये कौन है ?

देवगण—महाराज ! ये तो बड़ी सुन्दरी स्त्री है कहाँ ते आई ?

इन्द्र—अरे येतो मोकूं मालुम नांहि सो याही ते पूछो।

कालकन्या--महाराज ! मैं कालकी सुन्दरी कन्या हूँ। मेरौ विवाह अभी तक नहीं भयौए अर्थात् मोकूं कोउ स्वीकारऊ नहीं करैए। सो मैं स्वयं वर ढूंढ़वे कूं निकली हूँ। आप मेरे पति बनौ, मोय स्वीकार करौ मैं बलि जाऊं सबन की।

इन्द्र--अरेऽऽ रेऽ रेऽ रे विवाह विऽवाऽह कैसौ विवाह, कौन ते करौगी ? कहा मोऽते-मोते प्रस्ताव कर रही हौ ? अरेऽ ये कैसौ प्रस्ताव ?

कालकन्या—महाराज ! अवस्था तो मेरीऊ हैगई, पै अभीतक मैं आसरौ ढूंढ़त फिरी, कोऊ जब शरण न लेय तो आप और आपके सेवक कोऊ तो मोय लेंगे।

देवगण--अरे-रे देवगण ! ये कहाकहिरहीए, कछु बहकीली बक रहीए। का हम यातेई ब्याह करिवे कूं बैठे हैं।

एक देव—अरे करिलेउ कहाए-सेवामें परी रहैगी। कछु लैलेगी ?

दूसरा देव--भइया ! मेरे मनमें तौ कछु संशयए यामें। सो आपई वर ढूंढ़वेवारी ते मैं तो कबहूँ नाहि करूं और न काहू तें कहूँगौ कि याते ब्याह करौ।

कालकन्या--महाराज ! घबड़ाय क्यों रहे हौ ? मैं का आपकी इन शची रानी ते कम सुन्दरी हूँ। मेरे समान कोई नायें, जब मोय देखें तो बड़े ते बड़े विद्वान, धनवान, गुणवान्, कलाकारऊ मेरौ मान करैंए। जहाँ मैं जाके संग जांऊ वहां मेरौ कहबौई सब करैएं। वामनदेव मेरौ मान करैएं और मोकूं सब जग में जसई जस मिल्यौ करैए, धर्मशास्त्र मेरौ आदर करैएं, मेरे नियमन कौ लोक में जैसौ आदर होयो करै वैसौ पंडित और शास्त्रन कौऊ नाहिं होय। या तो लोक में देव पुजें या मैं, सो क्यों सोच करौ हौ ? मोय जबते राजा पुरु ने वरन करी और छोड़ी तब ते कहूँ मेरो आदर नहीं होय है।

इन्द्र—(मनमें—अरे नारदजी आये हैं। इनई ते पूछो कहा बात है, ये कौन है ? प्रकट स्वर में) नारदजी ! आप ही बताऔ ये कौन है ?

नारद—अरी कालकन्या ! हा, हा, हा, हा, हा। (मनमें) देवराज के चक्कर में है। याके रूपकूं जानई नांहि रहे, ये तो वृद्धावस्थाऐ, मैं समझि गयौ कि बुढ़ापे में आदर करैं सब लोग और बुढ़ापे में ही धर्म-शास्त्र कछु ढीले नियम वारे होय हैं।

कालकन्या—देवरिसी जी कहा सोच में परिगयेऔ, आप ब्रह्मचारीऔ, आपई मोकूं स्वीकार करौ।

नारद—हा, हा, हा, हा, हा—अरी तोकूं कोऊ और नांहिं मिल्यौ या जगत् में जो, मेरौ धरम-करम सब विगारवौ चाहै।

कालकन्या—मुनिजी ! मेरे ताईं आपकीऊ सोभा होइगी। भूलि रहेऔ।

नारद—देवराज ! सब रिद्धि-सिद्धि तो आप सम्भारौऔ येऊ आपई सम्हारौ। नारायण-नारायण-नारायण।

[सभा से नारद चलते हैं]

इन्द्र—अरी कालकन्ये ! तू इन्हींके पास चलीजा येही तेरीरक्षा करैंगे।

कालकन्या—अरे मुनी जी ! मोकूं संग लेचलौ।

नारद—दूर हटि, दूर हटिजा, मेरे ते ये बात अव मति करै।

कालकन्या—तो मैं कौन ते करूं ये बात ?

नारद—इन देवन के पास तोकूं ठौर नांहि मिली ?

कालकन्या—नांहि मिली तवई तौ आपके संग चली हूँ।

नारद—पधार मेरे पास ते मैं तो तेरेई विना सोभायमान हैरह्यौ हूँ। नारायण-नारायण-नारायण।

कालकन्या—नारदजी मोय त्यागौगे तो मैं सराप दैदऊंगी।

नारद—तू कहा तपस्विनी है, जो तेरौ सराप फलीभूत हैजाइगौ।

(जोर से)

कालकन्या—हाँ, महर्षि जी ! यदि मोय न लै चलौगे तो याद रखियों मेरौ सराप--तुम मारे--मारे डोलौगे । और तुम्हारौ कबहूँ गृहस्थ अब न होइगौ ।

नारद—हा–हा–हा हा हा,

अरे समझ गयो–मेरौ घर ही तौ न बनैंगो सो ठीकई तौए क्यौंकि मैं तो हरि गुण गातो भयो डोलूंगो मैं कौन घरबारी और बच्चानको मोह देखूंगो सो य तो सराप नाय वरदान मिल्यौ ।

पटाक्षेप

(दृश्यः–यवनराज के लोक में कालकन्या)

[प्राणियों का क्रन्दन, दूतोंका डांटना, फटकारना आदि]

एक दूत—अरे, दग्धमुख । ये स्त्री कौन चली आय रही है । कहा ये अपने स्वामी की कोई लगैऐ ?

दूसरा दूत–दग्धजिह्व ! अरे, कोऊ ऐसी-वैसी होती तो हम या हमारे भैय्या कोई संगमें न होते ?

[कालकन्या का प्रवेश]

कालकन्या—अजी कहाँ हैं तुम्हारे महाराजाधिराज ?

दूत--कहा करौगी आप, कहाँ ते आई हौ ? यहाँ तो आप ऐसी निर्भय है कें आई हौ जैसे कोई घरमें ही डोल रह्यौ होय ।

कालकन्या--अजी मैं तौ उन तेई मिलिवेकूं आईहूँ जो यहाँ नित सबन कूं धन देंय, दौलत देंय, सुख देंय ।

दूत--हाँ, वे तो हमारे महाराजऐं । चलौ, उनतेई मिलौ– वे निरौ सुखई नाय देय -बड़े-बड़े दुःखऊ देय ।

यवनराज--अरे कहा झगरि रह्यौएरे, अपने अपने कामन में लगौ ।

दूत--महाराज ! ये कोऊ कन्या आई है, सो आपते मिलनौ चाहे ।

यवनराज--लाऔ, लाऔ । जाय जल्दीमेरे ढिग लाऔ । दूरते सुन्दरी

लागौ हौ। और तुम कहा कहोहो; मैं जाननौ चाहूँ हूँ।

कालकन्या—महाराज ! अब आप मेरौ परिचय जानलेउ । ये तो ठीकई है क्योंकि आप तो छिपेभये कौतुकनकू दूरतेई देखिलियौ करौ हौ, जलमें करौ, चाहे थलमें, चाहे गगनमें करौ, पै आपते छिपे नांहि कहूँ कर्यौ। सो आप मोकू स्वीकार करौ। अब मोय अपनी पत्नी बनाऔ और आप स्वामी बनौ।

यवनराज—अरे ये बात झूठी, मैं तो कुल ते, गुनते, तुम्हें अपनी बहिन बनांऊगो बहिन, सो तुम स्वीकार करौ और मेरेई या लोकमें रहिकैं समय-समय पै मेरौ काम करौ,। ये मेरो भइया प्रज्वारए प्रज्वार, तुम जाकूं जानोहौ ?

कालकन्या—नाय महाराज ! मैं कहा जांनू।

यवनराज—तो कहा स्वीकार है मेरौ कह्यौ ?

कालकन्या—हां, स्वीकार है।

यवनराज—तो जाऔ या भइया के संग पुरंजन के नगर में जाऔ और वाकूं खूब लूटौ।

कालकन्या—आ हा हा हा हा हा हा,आ हा......(अट्टहास करती है) आज मोकूं कहूँ आसरौ तो मिल्यौ।

प्रज्वार—आऔ, कालकन्ये ! अब हम तुम दोनों या नगर कूं देखिकैं खूब लूटेंगे······· चलौ, चलौ।

(निकल जाते हैं)

यवनराज— (मन में) वृद्धावस्था के निमित्त जो लोग जीवे की आसा छोड़ देवेंगे याते मेरे ऊपरते लोगन की डीठ दूरि होयगी और मैं छिपौ भयौ सवन कूं अपने पास बुलवायौ करुगौ।

(चढ़ाई के बाजौं की ध्वनि)

यवनराज—अरे चण्डवेग ! तुम अपनी सेना कूं संग लैकें जल्दी चलौ।

चण्डवेग—महाराज ! मैं तो आपकी आज्ञासूं ३६० गन्धर्वनकूं लायौ हूँ और ३६० गन्धर्वीन कूं ये दोनों संग- रहैं है।

यवनराज—अरे चढ़ाई मैं जानौऐ-वहाँ कहूं घूमिवेकी सोचकें इन्हें लायौ है कहा ?

(दृश्य परिर्वतन–पुरंजन पै चढ़ाई)

(यवनराज के सैनिकननें पुरंजन की सेनाकौ नाशकर दियो और पुरंजन कों पकड़ लियौ)

पुरंजन—हा पुरंजनी, हा पुरंजनी, अरी पुरंजनी कहाँ गई, अरी मेरौ साथ छोड़ गई (रोयवे की आवाज– ऊँ ऊँ ऊँ ऊँ)

पुरंजनी –राजा पुरंजन ! अब मेरो बस कछु हैनहीं मैंहू दूरचली

पुरंजन—हां पुरजनी, अरी मेरौ सब कुटुम्ब कहाँ गयौ, अरी तू कहाँ चली, अरी पुरंजनी हा पुरंजनी। — (पुरंजनी चली जाती है)

(वाद्यध्वनि)

जातस्य हि ध्रुवो मृत्युः, ध्रुवं जन्म मृतस्य च

× × × ×

वासांसि जीर्णानि यथा विहाय

नवानि गृह्णाति नरोऽपराणि ।

तथा शरीराणि विहाय जीर्णा-

न्यन्यानि संयाति नवानि देही ।।

(दृश्य–पुरंजन अविज्ञात मिलन)

(युद्धभूमि-एक स्त्री–पुरुषके शरीर के साथ चिता में प्रविष्ट होनों चाहैं है सो एक पुरुष आवै है)

पुरुष—अरे मित्र ! पुरंजन ये कहा कररहे हौ ।

स्त्री—हाय, मैं विधवा है गई, अरे मेरेभाग्य ।

पुरुष--अरे मित्र ! तुम कौन के लिए रोयरहेहो ये तुम्हारौ कोइ नहीं लगे है ।

स्त्री--अरे ! ये मेरे पति हैं पति । तुम क्यों मोकूं दुःख देवै आये हो मोकूं मरन देउ ।

पुरुष--अरे मित्र ! मोय भूल गये । मैं तुम्हारो मित्र हूँ । कितनौ समझायौ कि या नवद्वारवारे नगर में मत जाओ पै न मानैं । मैं प्रतीक्षा करतौ करतौ तुम्हें ढूंढतौ अब आयौ हूँ, सो चलौ मेरे संग ।

स्त्री—अरे मित्र अविज्ञात

पुरुष—हाँ अब पहिचानौ, (प्रसन्न है हँसतेभये दोनों चलेगये)

(दृश्य परिवर्तन)

नारद--कहौ राजन् ? कहा समझे ?

प्राचीनबर्ही--मैं तो कछु नहीं समझौ ।

नारद—अरे देख राजा पुरंजन कौ अर्थ है जीवात्मा, और अविज्ञात कौ अर्थ है –परमातमा । पुरंजनी– बुद्धि है, पांचशिर कौ सर्प ही ५ प्राण हैं, नवद्वार वारौ नगर ये शरीरहै । बुद्धि के वश जीव रहै, और स्वप्न देखवो ही शिकार खेलवौ है । विषय भोगही सन्तान हैं । कालकन्या- बुढापौ है, चण्डवेग संवत्सर कौ नाम है, प्रज्वार- ही ज्वर है और यवनराज ही यमराज है । मरकें जीव फिर जन्म लिये है सो भक्ति कों प्राप्त करिकें जीवातमा परमातमा तें मिलिगयौ येई सार है ।

श्रीद्वारकाधीश अष्टक

कस्तूरी केसर कुमकुम तिलकावलि वारे
अरुन अधर, वेनी कपोल छबि धारन हारे
नासा ललित बुलाक देखि योगी जन हारे
द्वारकेश नव कंज विलोचन ईस हमारे ॥

चिबुक रत्न, घनस्याम वरन, सोभा अतिसाजै
कर कंकन मनि लसत, ग्रीव उर हार विराजै
कटि करधनि, नूपुर रसाल भ्राजत अनियारे
जयति द्वारकाधीश ईस मथुरा पति प्यारे ॥

मनिमय कंचन पीठ भवन ऊँची ध्वज सोहै
सुवरन कलस प्रदीप्त देखि मुनि मानस मोहै
नाना चित्र रचे लखि कोटिन काम लजारे
जयति द्वारकाधीश ईस प्रानन ते प्यारे ॥

नन्द जसोमति आसा परिपूरन तनुधारे
राधा प्रानाधार, गोपिका रमन, सुखारे
व्रज भूमी सर्वस्व नाथ तुमहीं रखवारे
भक्तन कों सुख देत द्वारकाधीश हमारे ॥

यमुना पावनमयी पखारत चरनन धूली
अष्टसिद्धि दायिनी रहत मन में अति फूली
व्रज भक्तन मन मोद कृपा सुख छावन हारे
जयति द्वारकाधीश मातु देवकि के वारे ॥

मथुरा कंस पछारि द्वारकापति बन प्यारे
नाना भोग समृद्धि सिद्धि ते घिरे दुलारे
जदपि द्वारका बसे, आस, मथुरा न विसारे
आये नेह निवाहि द्वारकाधीश हमारे

फागुन फाग, बसन्त फूल बंगला, अति सोहै ।
सावन झूला, घटा छटा सांझी, मन मोहै ।।
दीपमालिका अन्नकूट वैभव विस्तारे ।
जयति 'द्वारकाधीश' ईस प्रानन ते प्यारे ।।

प्रात मंगला पुनि श्रृंगार ग्वालहु की झांकी
राजभोग आरोग छटा उत्थापन बांकी
भोग भोगिया संध्या आरति सयन सुखारे
त्रिभुवन पति राजाधिराज चतुरायुध धारे ।८।

जो यह अष्टक पढ़ै, सुनै, ध्यावै, चित लावै ।
मन क्रम वचन अपार पाप रासीन नसावै ।।
कलियुग नाम अधार कहत सब मुनि निरधारे ।
'वासुदेव' भज नित्य द्वारकाधीश हमारे ।।

प्राच्यदर्शन महाविद्यालय वृन्दावन के प्रधानाचार्य, प्रख्यात विद्वान्

डा० शरणबिहारी गोस्वामी जीकी–

※ सम्मति ※

डा० वासुदेवकृष्ण चतुर्वेदी संस्कृत भाषा और साहित्य के लब्ध प्रतिष्ठ विद्वान्, प्राध्यापक एवं रचनाकार हैं। उनके अनेक ग्रंथ सुर भारती में प्रकाशित भये हैं। और मनीषीन द्वारा समादृत प्रकाशित भये हैं। विभिन्न संस्थानन ने और शासन ने उन्हें पुरस्कृत कियौ है। संस्कृत की यह परम्परा उन्हें पैतृक रूप में विरासत में मिली है याकौ परिवर्द्धन-संवर्द्धन श्री चतुर्वेदी जी ने खूब कियौ है।

ब्रजभाषा चतुर्वेदीजी की मातृभाषा है। इन दिनन यह भाषा, विशेषकर गद्य के क्षेत्र में, अपने व्रज-प्रदेस में हूं मुख्य साहित्य-धारा के प्रवाह में प्रमुख नहीं है। यदि यह रचना के स्तर पै प्रयुक्त है तो उन विद्वान भागवती कथा के पंडितन के कारण जो ब्रजभाषा में ही कथा-वाचन करैं हैं और याकूं सम्पूर्ण देश में प्रचारित करैं हैं। कथा और रास लीला में ब्रजभाषा की अपनी ही मिठास है। डा० चतुर्वेदो कूं श्रीमद्भागवत की कथा परम्परा हू संस्कृत-साहित्य के समान ही विरासत में प्राप्त भई है। माथुर चतुर्वेदोन के मुख ते ब्रजभाषा में कथा सुनिबौ एक आनन्दमय अनुभव है। ब्रजभाषा की साहित्यिक रचना कौ एक और महत्वपूर्ण केन्द्र है आकाशवाणी दिल्ली ते प्रसारित ब्रजमाधुरी कार्यक्रम और आकाशवाणी मथुरा के प्रायः सबई ब्रजभाषा कार्यक्रम ब्रजभाषा में साहित्य रचना के प्रेरक केन्द्र हैं।

डॉ० चतुर्वेदीजी ने ब्रजभाषामृत नामक अपने ग्रंथ में श्रीमद्भागवत कथा पीयूषके संग ही आकाशवाणीते प्रसारित अपनी वार्ता एवं रूपक हूं यामें संकलित हैं। इन रचनान की भाषा व्यावहारिक और संस्कृतनिष्ठ है। वामें प्रवाह है। आगे के लियैं यह भाषा अपनौं मान दण्ड स्थापित करैगी।

या कृति कौ सहर्ष स्वागत है।

–शरणबिहारी गोस्वामी

प्रसिद्ध पत्रकार वयोवृद्ध साहित्यकार पद्म विभूषण

पं० बनारसी दास जी चतुर्वेदी

की

* सम्मति *

मैंने "व्रजभाषामृत" पुस्तक को जहाँ तहाँ से पढ़वा कर सुना है। श्री वासुदेवकृष्ण जी चतुर्वेदी व्रजभाषा के अनन्य प्रेमी और प्रसिद्ध साहित्यकार हैं। पुस्तक बहुत मनोरंजक है और विशेषकर श्री कृष्ण शृंगार वर्णन श्री राधा जी से भेंट तथा व्रजभूमि और बाकी संस्कृति आदि अध्याय ज्ञान वर्धक हैं। निस्संदेह यह पुस्तक व्रज साहित्य में महत्वपूर्ण स्थान रखती है।

—बनारसी दास चतुर्वेदी

—*—

डा० वासुदेवकृष्ण चतुर्वेदी द्वारा लिखित एवं सम्पादित पुस्तकें

	नाम पुस्तक	मूल्य
१.	श्रीमद्भागवतके टीकाकार (उ० प्र० हिन्दी संस्थान द्वारा पुरस्कृत)	४५-००
२.	श्रीद्वारकाधीशमहाकाव्यम् (उ० प्र० संस्कृत अकादमी द्वारा पुरस्कृत)	६०-००
३.	ब्रह्मसूत्र उपनिषद् एवं श्रीमद्भागवत	१२५-००
४.	श्रीव्रजस्तवमालिका	४०-००
५.	श्रीमद्भागवतपात्रानुक्रमणिका	३०-००
६.	भागवतपरिचय	२०-००
७.	पदार्थविद्यासार	१५-००
८.	श्रीद्वारकाधीशका सं० इतिहास	५-००
९.	अमृततरंगिणी (गीताटीका)	२५-००
१०.	अभिज्ञान शाकुन्तलम्	२८-००
११.	संस्कृतसाहित्यका सं० इतिहास	१२-००
१२.	संस्कृत निबन्धनिकुंज (उ० प्र० सरकार द्वारा पुरस्कृत)	१०-००
१३.	कठोपनिषद् (प्रथमअध्याय)	१०-००
१४.	पंचतन्त्र (मित्रसम्प्राप्ति)	३-५०
१५.	अष्टाध्यायी (काशिका, हिन्दीटीका)	८-००
१६.	विक्रमोर्वशीयम्	२२-००
१७.	नन्दोत्सवः	५-००
१८.	दायभाग (याज्ञवल्क्य स्मृति)	२-५०
१९.	इन्दिराकाव्यम्	२-००
२०.	आनन्दकन्द चम्पू	(प्रेसमें)
२१.	सांख्यकारिका	(")
२२.	संस्कृतकाव्यसुधा (आगरा वि० वि० प्रकाशन)	३-१५
२३.	व्रजभाषामृत	२५-००

आवरण मुद्रण : मयूर प्रेस, मथुरा-१